मानव मन्दिर

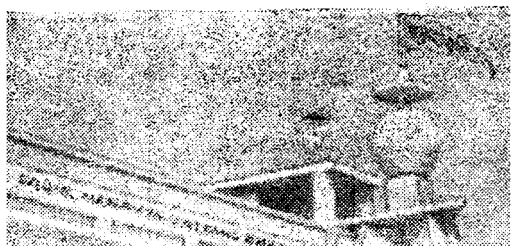

FORM

(See Rule 8)

Place of Publication	Hoshiarpur
Date of Publication	10th of every month
Periodicity of Publication	Monthly
Printer's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Hoshiarpur.
Editor's Name	Dr. Paras Ram Aggarwal
Nationality	Indian
Address	Manavta Mandir, Sutehri Road, Hoshiarpur.
Name and address of individuals, who own the Manav Mandir or partners or shareholders, holding more than one Percent of the total capital.	Faqir Library Charitabl Trust, Hoshiarpur.

I, Dr. Paras Ram Aggarwal hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dated : 10-3-85 *Signature of Publishe*

Printed and Published by : Dr. Paras Ram at Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir Hoshiarpus, for the Faqir Library Charitable Trust, Hoshiarpus

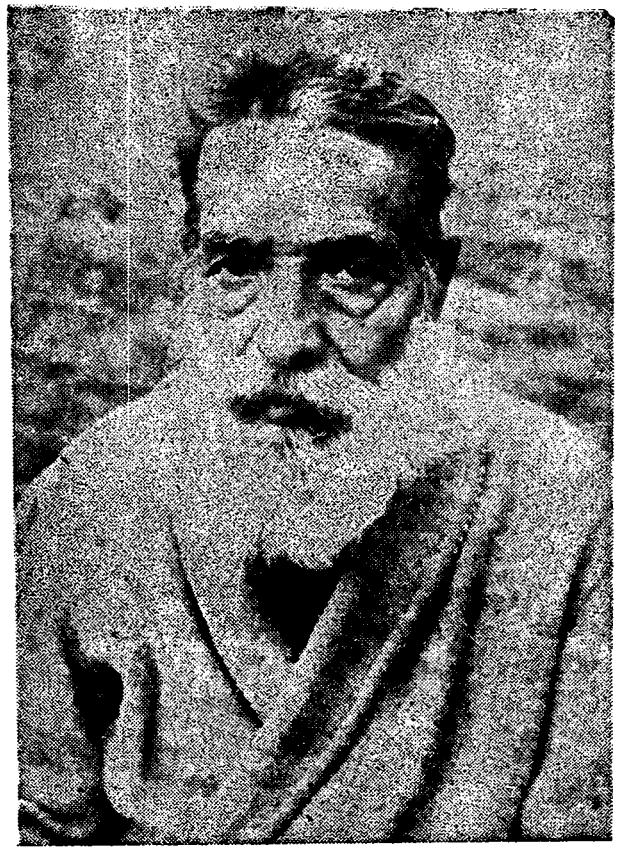

Param Sant Param Dayal Faqir Chand Ji Maharaj

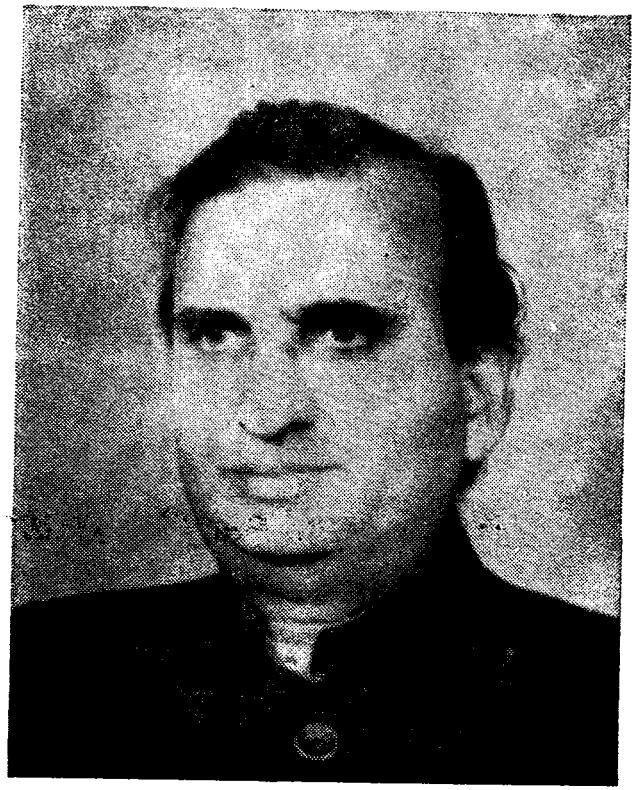

Param Sant Manav Dayal Dr. I. C. Sharma Ji Maharaj

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

BE MAN
मनुष्य बनो

सम्पादक :
डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 12	मंगलवार 10 सितम्बर 1985	संख्या 5

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

चौतना दरख्त और चतुर्युगी

जब दुनिया शुरू हुई थी उस वक़्त एक दरख़्त पैदा हुआ था उसका नाम 'कल्प' था। जब दुनिया पैदा होती है तो पहले यह दरख़्त पैदा होता है और अन्त तक क़ायम रहता है इसलिए इसका नाम 'कल्पवृक्ष' है। जो कल्प के शुरू से लेकर अन्त तक क़ायम रहे वो 'कल्प' कहलाता है। इस दरख़्त का नाम 'कल्पद्रुम' भी है। 'कल्प' से मतलब है मुराद (इच्छा) और 'द्रुम' दरख़्त को कहते हैं यानि यह इच्छाओं को पूरा करने वाला दरख़्त है। इससे अधिक आयु का कोई वृक्ष नहीं मिलता। अगर हम ग़लती पर नहीं हैं तो इसकी आयु शम्सी (सरज के) सालों के हिसाब से चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष की होती है और यही ब्रह्मा के एक दिन-रात का भी हिसाब है। जब ब्रह्मा जागता है तब यह कल्पवृक्ष पैदा होता है और जब ब्रह्मा सोने लगता है तब यह दरख़्त गुम (लुप्त) हो जाता है। इसकी बहुत बड़ी इज़्ज़त है।

इस दरख़्त के चार तने हैं और चारों अति सुन्दर और

लम्बाई-चौड़ाई के लिहाज़ से बराबर होते हैं। दरख़्त क्या है? एक चार स्तम्भ वाली इमारत है, उस पर शाखाओं और पत्तों का लदाव खूबसूरत हरे गुम्बद की शकल का हो गया है। वह गुम्बद किसी को नज़र नहीं आयेगा क्योंकि यह तमाम दुनिया में फैला हुआ है। बल्कि यूं कहना चाहिए कि सारी रचना उसी के साया के अन्दर हो रही है क्योंकि वह बहुत बड़ी चीज़ है इसलिए इसका नज़र आना सम्भव नहीं। बड़ी, छोटी, बहुत सूक्ष्म, बहुत ही बड़ी, दूर, बहुत दूर, बहुत नज़दीक, ढकी हुई और पर्दे के अन्दर छिपी हुई चीज़ें इन्सान की दृष्टि में नहीं आतीं वरना मैं तुमको खुली आँखों से इस वृक्ष को दिखा देता। ऐसा कभी न समझना कि यह दरख़्त नहीं है, यह है और ज़रूर है। हिन्दु उसे कल्पवृक्ष कहते हैं और मुसलमानों ने इसी का नाम दरख़्ते तूबा (वहिश्ती दरख़्त) रख छोड़ा है। जब उसका नाम है तो रूप भी ज़रूर होगा। कहा जाता है कि "नाम बड़ा और दर्शन थोड़ा" यह मामूली चीज़ों के लिए कहावत है परन्तु कल्पवृक्ष के बारे में तो ऐसा कहना चाहिए कि "दर्शन बड़ा और नाम थोड़ा" और इसी बड़ाई के कारण हम उसे देख नहीं सकते। हालाँकि हम में से कोई देवता, आदमी, जिन्न, परी और कीड़ा-मकोड़ा ऐसा नहीं है जो इस वृक्ष की छाया के नीचे न रहता हो बल्कि यही सबके रहने का मकान है। परन्तु बहुत कम ऐसे आदमी मिलेंगे जो इसके नाम और निशान से वाकिफ़ होंगे। ऋषियों और पैग़म्बरों ने उसे कैसे देख लिया क्योंकि ये भी तो इन्सान ही थे मगर देखा ज़रूर होगा वरना पुश्तहा-पुश्त (वंश-परम्परा से) इन्सानी नसलें उसका नाम कैसे सुनती आईं?

पहला दौर :

यह दरख़्त है और जब यह कल्प के शुरू में पैदा हुआ

तो तमाम इन्सान बच्चों की सूरत में पैदा हो गये और उसी के नीचे खेलने-कूदने लगे। वे खुश थे, उन्हें किसी प्रकार का दुःख नहीं था और न उनको कोई चिन्ता थी। यह खुशी एक अरब सात लाख अट्ठाईस हज़ार वर्ष तक क़ायम रही और दुनिया में सभी छोटे बच्चों की तरह खेल-कूद और खुशी में मस्त (लीन) रहते थे। उस वक्त तमाम लड़कों में से चार लड़के ऐसे थे जो बचपन की खुशियों को ग़नीमत समझते थे और सबको हिदायत करते थे कि "खूब खेलो-कूदो, चैन उड़ाओ, लड़के ही बने रहो इसी में सब कुछ है। बचपन ज़िन्दगी का सुनहरी हिस्सा है।" इनमें पहले लड़के का नाम था "सनक", उसकी यह आदत थी कि जो कुछ पास होता सब दे-दिला कर आज़ाद रहता था। दूसरे लड़के का नाम "सनन्दन" था। यह हर वक्त आनन्द में मग्न रहता था। तीसरे लड़के का नाम "सनत्कुमार" था। यह कुमार यानि बचपन को ग़नीमत समझ कर हमेशा उसी के ख़्याल में मस्त रहा करता था। चौथे लड़के का नाम "सनातन" था। उसकी यह तारीफ़ थी कि सिर्फ़ एक विश्वास के ख़्याल में मस्त रहा करता था। ये चारों सिफ्तें उनके नाम में मौजूद थीं। पहिले ज़माने में यह रिवाज था कि जिसमें जो खूबियाँ होती थीं उनके मुताबिक ही उसका नाम रखा जाता था। ये चारों बच्चे तमाम बच्चों को साथ लिये हुए जीवन का आनन्द लेते थे और गाते फिरते थे :—

हम खुश हैं और खुशी से, हमको काम हमेशा रहता है।
खुशी खुशी में खुशी का, लब पर नाम हमेशा रहता है।
खुशी का खाना खुशी का पीना, खुशी के खेल तमाशे हैं।
खुशी का शुग़ल हमारा सारा, सुबह शाम हमेशा रहता है।

यह कुछ नहीं करते थे। दरख़्त के तले उछलते-कूदते रहते थे। जिस चीज़ का दिल में ख़्याल आया वही चीज़

उसी वक़्त उनके हाथ आ गई और वे गुलछर्रे उड़ाने लगे।

इत्तफ़ाक की बात है उस जमाने के आख़िर में दो लड़के पैदा हुए। लो ज़रपसन्द और ज़रपरस्त थे उनका नाम हिरण्याक्ष (हिरण्य-सोना और अक्ष-आँख) और हिरण्यकशिपु (हिरण्य-सोना और कशिपु कश-शराब और 'प'-पीना) था। यह सोचने लगे हमको इच्छा के मुताबिक हर चीज़ मिल जाती है, यह कैसे मिल जाती है? इसका पता लगाना चाहिए। आख़िर सोचते-२ उनकी समझ में यह बात आई कि हो न हो इस कल्पवृक्ष के साया में यह तासीर है। इसके साया में रहकर जो चीज़ मांगी जाती है वह मिल जाती है। दोनों ने हाथ में कुल्हाड़ी ली और कल्पवृक्ष के एक तने को काटना शुरू किया ताकि उन्हें पता लग जाये कि यह किस तरह इच्छा पूरी करता है। जब सब लोगों ने समझाया कि यह क्या करते हो? इसके काटने से दुनिया में मुसीबत आ जायेगी, तुम को तो हर चीज़ यूं ही ख़्याल करने से मिल जाती है फिर दरख़्त की जड़ क्यों काटते हो? परन्तु उन्होंने नहीं सुना और उसके एक तने को काट ही डाला। यह बड़े ज़ुर्म का वाक्या हुआ। उसी वक़्त चार लड़के पैदा हुए। एक का नाम था 'मच्छ' (मद यानि खुश रहना), दूसरे का नाम था 'कच्छ' (क का मतलब पानी और छ का मतलब काटना), तीसरे का नाम था 'वराह' (वर का मतलब अच्छा और हन मारने वाला) और चौथे का नाम था 'नरसिंह' (नर-आदमी और सिंह-चौपाया) ये पैदा हुए और उन बदज़ातों को क़त्ल कर दिया और प्रह्लाद (प्र का मतलब पहले और हलाद का मतलब खुशी) यानि पहिले जैसा खुशी का राज्य क़ायम करना चाहा और उसका कुछ नतीजा भी ज़रूर हुआ लेकिन काटे हुए तने को क़ायम न कर सके। इस तने का नाम था 'इच्छा का तना'। वो

तो कट गया और दुनिया पर दुःख और मुसीबतों के हमले होने शुरू हो गये।

दूसरा दौर :

जिस वक्त से कल्पवृक्ष का पहिला तना कट गया दुनिया में मुसीबतों का आना शुरू हो गया। लोगों ने बहुत कोशिश की कि इसी तरह उनकी इच्छानुसार काम होने लगे परन्तु कोई न कोई नुक्स रह जाता था। तब एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा यानि तीन बुद्धिमान् पुरुषों ने आकर इस गुत्थी को सुलझाने की कोशिश की। एक का नाम था 'वामन', यह बहुत छोटे क़द का आदमी था परन्तु था बहुत होशियार। उसने कहा सब मिलजुल कर यज्ञ का प्रबन्ध करो. अगर एक आदमी की इच्छा से काम नहीं निकलता तो इकट्ठी इच्छाएँ यज्ञ की तरक़ीब से शक्तिशाली साबित होंगी और तुम्हारी कमी पूरी होती रहेगी। परन्तु एक शर्त है कि यज्ञ के काम में ग़रूर (अहंकार) और बड़प्पन न हो बल्कि वो निष्काम और संसार की भलाई के ख़्याल से हो। दूसरे का नाम 'परशुराम' था। उसने समझाया कि यज्ञ करने के लिए पहिले मन की घड़त होनी चाहिए। इसके बग़ैर इन्सान यज्ञ करने के क़ाबिल नहीं बनेगा। अगर मानसिक भाव मुँहज़ोर रहेंगे तो क़दम-२ पर खुदगरज़ी का सवाल पैदा होगा और कामयाबी की सूरत न पैदा होगी। तीसरे बुद्धिमान् इन्सान 'राम' ने यह समझाया कि मिलजुल कर यज्ञ करने से तुम्हारा काम तो निकलेगा परन्तु स्थूल तबके में माद्दी ताक़त से काम लिए बग़ैर काम नहीं निकलेगा और साथ ही मुँहज़ोर इच्छाओं को भी दबाना पड़ेगा। इन तीनों के वक्त में यज्ञ का रिवाज जारी हुआ परन्तु दुनिया तो दुनिया

ही है। तीन पुरुष एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा ऐसे पैदा हुए जो मानसिक इच्छाओं की पूर्ति और निजी स्वार्थ को ही सब कुछ समझ कर कल्पवृक्ष के दूसरे तने को काटने के लिए प्रयत्न करने लगे। उनमें से एक का नाम 'बलि' था जो दान-दक्षिणा को कामयाबी का साधन समझता था। दूसरा 'सहस्रबाहु' था जिसमें हज़ारों किस्म की मानसिक इच्छाएँ मुंहज़ोर (प्रबल) थीं। तीसरा 'रावण' था जो योग के ज़रिये मानसिक शक्ति को पूर्ण करने में विश्वास रखता था। बलि यज्ञ के बिरुद्ध नहीं था परन्तु उसने यज्ञ को दान देने का ज़रिया बनाया, निजी प्रसिद्धि को जीवन का उद्देश्य समझा। सहस्रबाहु को इच्छाओं को स्वयं पूर्ण करने का घमण्ड था और वह किसी की सुनता नहीं था। रावण को आसुरी योग के बल का घमण्ड था इसलिए वह प्रकट रूप में तथा गुप्तरूप में यज्ञ का प्रबन्ध करने लगा। वामन ने बलि को हिदायत की और माद्दी (सांसारिक) बल को अपने आधीन कर लिया। परशुराम ने सहस्रबाहु यानि हज़ारों माद्दी जज़बात वाले विरोधी को मिट्टी में मिलाया और राम ने रावण की बुरी तरह से खबर ली और उसे मार गिराया और यज्ञ का रिवाज़ शुरू हुआ। सब की इच्छाएँ पूरी होने लगीं परन्तु यह भी एक असूल है कि जहाँ नेकी का असूल काम करता है वहाँ बदी का असूल भी दवा नहीं रहता, वह भी उभरने की ताक़ में लगा रहता है। राम, वामन और परशुराम ने यज्ञ का रिवाज़ तो किया और इस रिवाज़ का तो केवल इतना ही उद्देश्य था कल्पवृक्ष के एक टूटे हुए तने की कमी को पूरा किया जाये। यह कमी पूरी भी हो गई परन्तु अन्त में शरारती लोगों की शरारत कामयाब हो गई और कल्पवृक्ष का दूसरा तना भी टूट कर नीचे गिर गया और फिर वैसा

ही हज़ारों किस्म की बलाएँ (मुसीबतें) जीवों के सिरों पर मंडराने लगीं :—

बलाएँ ऐसी कि जिनका नहीं था हद्दो हिसाब।
हर इक बशर था जहाँ में ज़लीलो ख्वारो खराब॥
मुसीबतों से कोई आहो नाले करता था।
कोई कोई कभी हसरत से आहें भरता था॥

इस यज्ञ के रिवाज़ के ज़माने का नाम त्रेतायुग, तीन टाँगों वाला वक्त था। सतयुग में सिर्फ़ इन्सानियत का ख्याल ही काफी था। कल्पवृक्ष के एक तने के टूट जाने से तीन वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य), तीन वेद (ऋग्, साम, यजुष्), तीन आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ) इत्यादि क़ायम किये गये। जो यज्ञ नहीं करते थे वे शूद्र और संन्यासी इत्यादि थे। उनकी हिदायत के लिए चौथा वेद 'अथर्व' बना।

तीसरा दौर :

एक तना तो टूटा हुआ था दूसरा भी टूट गया। कल्पवृक्ष की आधी ताक़त यानि उसमें सिर्फ़ आधी ज़िन्दगी रह गई। अब लोग मुसीबतों से घबराने लगे। दुःख बढ़े, मुसीबत बढ़ी और इसके साथ-२ इन्सानी नसल भी बहुत बढ़ गई और सबको इन मुसीबतों से छुटकारा पाने का ख्याल पैदा हुआ। बुद्धिमान् पुरुषों ने इकट्ठे बैठकर सोचना शुरू किया और यह नतीज़ा निकाला कि अब केवल ध्यान से काम नहीं निकलता और यज्ञ ही हमारे काम आ सकता है। यह पिछले युगों के धर्म थे। सतयुग में जीव ईश्वरकोटि थे, त्रेता में ऋषिकोटि थे और अब जीवकोटि हो गये। इसलिए भलाई इसी बात में है कि मूर्तिपूजा का रिवाज़ डाला जाये यानि इन्सान अपने ख्यालात या अपनी इच्छाओं के चित्र बनाना शुरू करे और उसी को अपने दुःखों के दूर करने का

साधन माने। अब बग़ैर मूर्तिपूजा के और किसी प्रकार दुःखों का अन्त न होगा। इस रिवाज को चलाने वाले दो पुरुष थे। एक का नाम था 'कृष्ण' और दूसरे का नाम था 'बुद्ध'। इनके ज़माने में वेद को जो अब दुनिया के ज्ञान और क़ानून का भण्डार था किताबी शक्ल दी गई। पहिले जो काम ज्ञान या यज्ञ से होता था वह अब मूर्ति के द्वारा होने लगा। अगर किसी को किसी से कुछ कहना है तो अपने ख्यालों की मूर्ति शब्दों की सूरत में बना देता और उसके पास भिजवा देता। वो समझ जाता और उसका काम कर देता था। पहिले वेद ज़बानी याद किये जाते थे अब आँखों से देखने और पढ़ने की चीज बन गये। इसी प्रकार उस ज़माने में इन्सान ने लाखों और करोड़ों मूर्तियाँ बनाईं। इनसे लाखों क़ौमें, फिरके, मज़हब और धर्म-कर्म बन गये और बनते चले जा रहे हैं। इस मूर्तिपूजा का विरोध भी कुछ लोगों ने किया परन्तु कृष्ण ने उन्हें मार भगाया।

ये महापुरुष अपना काम कर गये। धर्म की कमी के समय ये प्रकट हुए और धर्म की कमी को पूरा किया। चूंकि बदी का असूल भी साथ-२ अपना काम करता है इसलिए बुराई करने वालों की कोशिश से कल्पवृक्ष का तीसरा तना भी आखिर को टूट गया। इस ज़माने का नाम 'द्वापर' था। यह संस्कृत के दो शब्दों से 'द्वा' (दो) और 'पर' (बाद) से बना है। त्रेता संस्कृत के दो शब्दों 'त्र' (महफूज़ करना) और 'इत' (पाना) से निकला है। त्रेता की आयु बारह लाख छियानवे हज़ार साल की और द्वापर की आठ लाख चौसठ हज़ार वर्ष की होती है। ये तीन युग हैं— सत (पूरा), त्रेता (पूरे की हिफ़ाज़त), द्वापर (मूर्ति का ज़माना)।

चौथा दौर :

कल्पवृक्ष के तीन तने टूट गये और केवल एक बाकी रह गया। तमाम दुनिया में मुसीबतों की घटा छा गई और अनेक प्रकार के पाप होने लगे। सतयुग में पाप और पुण्य का ख्याल इस क़दर नहीं था। त्रेता में पाप एक चौथाई हो गया। द्वापर में पाप और पुण्य बराबर हो गये। द्वापर के अन्त में जब कल्पवृक्ष का तीसरा तना कट गया तब पाप की मिकदार तीन चौथाई हो गई और पुण्य की सिर्फ़ एक चौथाई रह गई। इसलिए जुर्म सख्ती, ज़बरदस्ती, मारधाड़ और लूटपाट इत्यादि के वाक्यात दुनिया में बहुत ज़्यादा होने लगे और इनका नतीज़ा यह हुआ कि मुसीबत पर मुसीबत आने लगी। इस चौथे दौर का नाम 'कलियुग' है।

सतयुग का ज़माना सत्रह लाख अठाईस हज़ार वर्ष	17,28000
त्रेता का ज़माना बारह लाख छियानवे हज़ार वर्ष	12,96000
द्वापर का ज़माना आठ लाख चौसठ हज़ार वर्ष	8,64000
कलियुग का ज़माना चार लाख बत्तीस हज़ार वर्ष	4,32000
योग	43,20000

इस वक्त तक कलियुग के पाँच हज़ार इकत्तीस वर्ष गुज़रे हैं। कल्पवृक्ष का तना तो कट ही गया परन्तु अभी तक कटे हुए ठोंठ में कुछ जान बाकी है इसलिए उसमें द्वापर का असर मौजूद है। जब यह असर जाता रहेगा उस वक्त जो मुसीबत इन्सान के सिर पर आयेगी वो भी कम होगी।

कलियुग के बारे में कोई क्या भविष्यवाणी कर सकता है, यह घोर पाप का ज़माना कहलाता है। इसके दौर में

तमाम दुनिया स्वार्थपर हो जायेगी। देश, देश का दुश्मन, कौम, कौम की दुश्मन, हर एक आदमी दूसरे का दुश्मन। अगर इसे दुश्मनी और खुदगरजी का ज़माना कहा जाये तो नामुनासिब न होगा। इस दौर में शान्ति दूर हो जाती है, बेचैनी फैल जाती है और इन्सान इस क़दर खुदगरज हो जाता है कि माता और पिता का क़तल करने से भी परहेज़ नहीं करता। यह अक़ल और हुनर की तरक्क़ी का ज़माना होता है। इसमें आये दिन नई-नई ईज़ादें (आविष्कारों) की भरमार होती है और यह आविष्कार स्वार्थ के हथियार बनकर दुनिया में बरबादी मचा देते हैं। बुद्धि और विद्या इस हद तक बढ़ जाते हैं कि वो जुर्म और सितम के शस्त्र बन जाते हैं। यह वो ज़माना है कि जिस वक्त यह अपने पूरे यौवन पर आयेगा तो उस वक्त इन्सान न सिर्फ़ आसमानों की सैर करने के काबिल होगा बल्कि एक जगह बैठा हुआ तमाम दुनिया के हालात पर नज़र डाल सकेगा। देवता (कुदरत की ताक़तें आग, पानी, हवा, आकाश, बिजली और बिजली से भी ज़्यादा तेज़ और जल्दी असर करने वाली ताक़तें) इसके हाथ आ जायेंगे। और वे सब के सब उसके खुदगरज़ी के औज़ार बन जायेंगे। अपने आराम और खुशी के लिए इन्सान नित्य नई-नई तरक़ीबें निकालेगा परन्तु आराम और खुशी का कहीं नाम तक न होगा, क़हत (भुखमरी) होंगे, बाढ़ें आयेंगी, तूफ़ान उठेंगे, ज्वालामुखी फूटेंगे, आसमान से बहुत से सितारे टूटेंगे। धन सिर्फ़ थोड़े ही आदमियों के कब्ज़े में रहेगा और वो बाकी आदमियों को अपना ग़ुलाम बनाने की फ़िक्र में लगे रहेंगे। इसका नतीज़ा कशमकश (खींचातानी) होगा। बलवान् कमज़ोरों को सतायेंगे। इन्सान को रहने की ज़मीन, खाने की गिज़ा, पीने का पानी, साँस लेने की हवा, खाना पकाने की गरमी

और रोशनी इत्यादि सबके लिए नये-२ टैक्स देने पड़ेंगे। जंगल कट जायेंगे, बस्तियाँ बसेंगी परन्तु रहने वालों को चैन नहीं मिलेगा। किसी की दाद-फ़रियाद नहीं सुनी जायेगी। अदालतें होंगी परन्तु इन्साफ का पलड़ा रिश्वत की तरफ झुका रहेगा। पुलिस बहुत रखी जायेगी उसका मक़सद (उद्देश्य) अमनो-अमान फैलाने का कहा जायेगा परन्तु वो जनता का खून चूसने का ज़रिया बनेगी और पुलिस के नाम से डर कर लोग अपने कानों पर हाथ रखेंगे। बादशाह आरामपसन्द होकर प्रजा के आराम का ख्याल नहीं करेंगे। क़ानून ऐसे होंगे कि लोगों की ज़बान बन्द कर दी जायें और वे अपने ख्यालात को ज़ाहिर न कर सकेंगे। अच्छे और बुरे की कोई पहिचान नहीं रहेगी। इन्सान असलीऔर ताक़तवर गिज़ा को तरफ से बेपरवाह होकर कमज़ोर और चटखारे की चीज़ों पर जान देगा। मेह के कुदरती पानी को पीने से परहेज़ करेंगे लेकिन सब सेहत को खराब करने वाले पानी के लिए जान दगे। बीमारियाँ इतनी बढ़ जायेंगी कि दवा का इस्तेमाल गिज़ा की तरह होने लगेगा। इन्सानी आबादी बहुत बढ़ जायेगी और आपस में लड़ती-झगडती ऐसे दिखाई देगी जैसे बरसात के गन्दे पानी और कीचड़ में बेशुमार कीड़े-मकौड़े पैदा होकर एक दूसरे को काटने और खाने लगते हैं। ज़ाहिरदारी और दिखावा बहुत बढ़ जायेगा। सादगी बिलकुल समाप्त हो जायेगी। ये सब कलियुग के असरात होंगे।

ख़ैरियत यह होगी कि कल्पवृक्ष का एक तना कटने से बचा रहेगा। उसकी जड़ में भी कुल्हाड़ी लगाने वाले बहुत से इन्सान पैदा हो जायेंगे, और जब उसकी जड़ काटने की नौबत आ जायेगी तो एक इन्सान पैदा होगा जिसका नाम 'कल्कि' होगा और वो खुदगरज़, धोखेबाज

और जुर्म करने वाले इन्सानों को ख़ाक में मिला देगा। उस वक्त उस वाकी बचे हुए तने की जानदारी की वज़ह से तीनों कटे हुए तनों में नई जान आ जायेगी, नई कोंपलें फूटेंगी। और जब इन चारों के क़द बराबर हो जायेंगे उस वक्त फिर सतयुग का दौर शुरू होगा और फिर सब अमन और चैन के साथ पहिले ज़माने के आदमियों की तरह रहने लगेंगे।

प्रश्न—आप ये सब बातें अपनी तरफ से कहते हैं या हमारे शास्त्रों में भी ऐसा ही लिखा है?

उत्तर—मैं कहता तो शास्त्रों के अनुसार हूँ परन्तु उनका हवाला नहीं देता।

प्रश्न—और बातों पर तो मुझे एतराज नहीं है लेकिन आपने जो यह कहा है कि यज्ञ केवल त्रेता का धर्म है यह ग़लत मालूम होता है क्योंकि अब तक देश में यज्ञों का रिवाज़ है और किसी पुस्तक में ऐसा नही लिखा है।

उत्तर—मैं तो अपने अनुभव की बात कहता हूँ परन्तु पुस्तकों में भी ऐसा लिखा है :—

ध्यान प्रथम जुग मख जुग दूजे, द्वापर परितोषित प्रभु पूजे।
कलि केवल इक नाम आधारा, श्रुति स्मृति सन्त मत सारा।

प्रश्न—तो वो लोग जो कलियुग में ध्यान, यज्ञ और मूर्तिपूजा करते हैं क्या वे अधर्मी हैं?

उत्तर—मैं उन्हें अधर्मी तो नहीं कहता परन्तु वो टेकी, अज्ञानी और पुरानी लकीर के फ़कीर हैं। जब शास्त्रों ने आज्ञा दे दी कि सतयुग का धर्म ध्यान, त्रेता का धर्म यज्ञ, द्वापर का धर्म मूर्तिपूजा है तो शास्त्रों की दृष्टि से इन धर्मों का निषेध हो गया, वे इस युग के धर्म नहीं रहे। और जो ऐसा करते हैं वे अपने शास्त्रों के विरुद्ध करते हैं। इससे ज़्यादा मैं उनके बारे कुछ नहीं कहना चाहता। अगर शास्त्रों

का कहना ठीक है तो इनका तरीक़ा बिलकुल ग़लत है। और यदि इनका तरीक़ा ठीक है तो शास्त्र गुमराह करने वाले और धोखा देने वाले हैं।

प्रश्न—तो फिर कलियुग का क्या धर्म हुआ ?

उत्तर—नाम।

प्रश्न—क्या नाम के जपने से कलियुग के पापों से रिहाई मिल जायेगी ? और नाम से परम पद की प्राप्ति सम्भव है ?

उत्तर—हिन्दु शास्त्र ऐसा ही कहते हैं।

प्रश्न—लेकिन यह बात समझ में नहीं आती ?

उत्तर—समझ में कैसे आवे। हिन्दुओं में समझाने-बूझाने का प्रबन्ध हो नहीं है। न वो ध्यान को समझते हैं, न यज्ञ को समझते हैं और न मूर्तिपूजा को। फिर वो नाम को कैसे समझते।

ध्यान में चारों अन्तःकरण एकाग्र होते हैं। चित्त, मन, बुद्धि और अहंकार ये ध्यान के चार चरण हैं। पुराणों ने इनके चार रूप मच्छ, कच्छ, वराह और नरसिंह क़ायम किये हैं। इन शब्दों पर लोगों ने कभी ग़ौर नहीं किया।

यज्ञ संस्कृत धातु 'यज्' (पूजा करना) से निकला है। इसका मतलब सिर्फ़ यह था कि पूजा की विधि इस प्रकार की हो कि ध्यानशक्ति अपना काम कर सके। इसे भी लोगों ने बाहरी व्यवहार में खपाया।

मूर्तिपूजा का मक़सद मूर्ति के ज़रिये से अपनी ध्यान-शक्ति को दूसरे पर प्रकट करना है। जैसे आवाज़ की मूर्ति हरफ़ों की बनाई गई, चिट्ठी लिखी गई और पत्र कलकत्ता भेजा गया। यह भी लोगों की समझ में नहीं आया। मूर्तिपूजा की मुराद थी कुछ और, और हो गई कुछ और।

इसी प्रकार नाम के जपने की मुराद है कुछ और,

और ली जाती है कुछ और। इस नाम से भी ध्यानशक्ति के उभारने का ही मतलब था। जिस तरह से यहाँ किया जाता है वह राज़ और रहस्य अन्दरूनी है। जो ज़बानी नाम के जाप में लग गये फिर उन्हें लाभ कैसे होता! नाम कलियुग का धर्म है, श्रुति, स्मृति और सन्तमत का सार है।

प्रश्न—यह नाम मैं किस तरह से जपूं?

उत्तर—कुछ दिनों राधास्वामी मत का सत्संग करो। जब तमाम बातें तुम्हारी समझ में आ जायें और दिल के अन्दर कोई भरम और वहम न रहे उस वक्त हम तुमको अन्तरी अभ्यास की विधि बतायेंगे और वो नाम लेने की तरकीब होगी।

नोट :—मेरी आप सब मानव मन्दिर पढ़ने वालों से हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि आप मानव मन्दिर में छपे लेखों को दो या तीन बार ज़रूर पढ़ा करें।

जनरल सेक्रेटरी
नारायण दास डोगरा
मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

नोट :--कर्म का फल आदमी को ज़रूर भोगना पड़ता है। इससे बचाव की कोई सूरत नहीं है। यह कुदरती क़ानून और क़ायदा है। जो अज्ञानी हैं वो कर्मभोग के सिलसिले में दुःख महसूस करते रहते हैं। जिनको विवेक, विचार और ज्ञान हासिल है वो इसे चुपचाप बरदाश्त के साथ भोग लेते हैं। इसीलिए कहा गया है :--

कर्म भोग भोगे बनै, यह जाने सब कोय।
ज्ञानी भोगे ज्ञान से, मूरख भोगते रोय॥

—दाता दयाल

सत्संग हजूर परमदयाल
पं० फ़कीरचन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर
9-2-1983
शब्द की महिमा

गुरु का दरस तू देख री, तिल आंसन डार,
शब्द गुरु नित सुनो री, मिल बासन जार।
गुरु रूप सुहावन अति लगे, घट भान उजार,
कमल खिलत सुख पावई, भौंरा कर प्यार।
गुरु ज्ञान न पाया हे सखी, जिन घट अंधियार,
पूरा सतगुरु ना मिला, भरमत भौ जार।
मैं तो सतगुरु पाइया, जाऊँ बलिहार,
ज्यों चकोर चन्दा गहे, रहूँ रूप निहार।
सतगुरु शब्द स्वरूप हैं, रहें अर्श मँझार,
तू भी सुरत स्वरूप है, रहो गुरु की लार।
नैनन में गुरु रूप है, तू नैन उधार,
सरबन में गुरु शब्द है, सुन गगन पुकार।
राधास्वामी कह रहे, यह मारग सार,
जो जो मानें भाग से, सो उतरें पार।
राधास्वामी ! (एक व्यक्ति की ओर संकेत करके) आप

कहाँ से आये हैं ? हजूर मैं अमृतसर से आया हूँ।

मैं नाककटों में शामिल नहीं हुआ और न ही जी-हजूरी जानता हूँ। हिन्दु हूँ, ब्राह्मण खानदान में जन्म लिया है। भिन्न-२ वाणियाँ पढ़ी हैं। कोई विष्णु की पूजा बताता है, कोई शिव जी की उपासना बताता है, कोई राम की या कोई मुहम्मद साहिब की भक्ति बताता है, कोई साकार और कोई निराकार की पूजा बताता है। मेरी किस्मत इस खोज के सिलसिले में कि असली मालिक कहाँ है मुझे हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज के चरण-कमलों में ले गई। उन्होंने मुझे राधास्वामी मत या कबीरमत या सन्तमत की शिक्षा दी। वाणी में सब मत-मतान्तरों का खण्डन पढ़ा तो उस समय मैंने प्रण किया था कि सच्चा होकर इस लाईन पर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा वो संसार का बता जाऊंगा। हो सकता है कि मैंने जो समझा है वो ग़लत हो। प्रकृति का अन्त किसी ने नहीं पाया। कई बार सोचता हूँ कि इस अनुभव के कहने से भी क्या लाभ ? यह तो मेरा अपना ही जज़बा, अपना ही कर्म और अपनी ही वासना थी कि अपना अनुभव संसार को बताऊंगा।

लोगों के अन्दर रूप प्रकट होते हैं। किसी के अन्दर राम का, किसी के अन्दर कृष्ण का, किसी के अन्दर किसी देवी का और किसी के अन्दर किसी गुरु का। जिस पर किसी का विश्वास होता है उसी का रूप उसके अन्दर प्रकट होता है। रूप के अन्दर में प्रकट होने से यदि कोई यह समझे कि अब उसके जीवन में संघर्ष नहीं होंगे या कोई ऊँच-नीच नहीं होगा या उसको अशान्ति नहीं आयेगी तो यह बात ग़लत है। मेरे अनुभव में यह बात नहीं आई है। थोड़ी देर के लिए प्रेम के जज़बे के प्रभाव के अधीन ध्यान करने से उसको आनन्द मिलेगा। हो सकता है कि उसमें

सिद्धिशक्ति भी आ जाये। क्योंकि सिद्धिशक्ति मन की एकाग्रता से होती है। एकाग्रता चाहे कोई राम पर करे, कोई कृष्ण पर करे, ओम् पर करे चाहे अल्ला पर करे। उसकी एकाग्रता का फल उसे मिलेगा।

छोटी आयु में मैं राम का ध्यान किया करता था फिर कृष्ण जी का ध्यान किया करता था और फिर हजूर दाता दयाल जी का ध्यान करने लगा। मेरी सारी आयु इसी धुन में गुज़र गई। मैं जो कुछ कहता हूँ अपने ज़ाती अनुभव के आधार पर कहता हूँ। मन को छोड़ने या मन से ऊपर चले जाने के बाद सुख और शान्ति मिलती है। मन के संकल्प से आनन्द मिल सकता है, सिद्धिशक्ति मिल सकती है, मनोकामनाएँ पूरी हो सकती हैं मगर आवागमन के चक्कर से छुटकारा नहीं मिल सकता। क्यों? चौदह लोक में मन बसता है और मन ही सब कुछ करता है। मन से आगे की Research (खोज) सन्तों ने की है। दुनिया खोज करती हुई चली आ रही है। ज्योतिष में पहले सात ग्रह थे, फिर नौ ग्रह हो गये और अब दो ग्रह और प्रकट हो गये हैं यानि अब ग्यारह ग्रह हो गये हैं। इससे यह साबित हुआ कि ज्योतिष का पहले जो अनुभव था इससे आगे और भी अनुभव है। यह दो ग्रह जो अब और प्रकट हो गये हैं इनका वर्णन शास्त्रों में भी नहीं है। इसका अर्थ यह है कि मानवीय जीवन खोज में उन्नति कर रहा है। Medical Science ने भी बहुत उन्नति की है। किसी ज्योतिष के ग्रन्थ में या किसी वेद में यह नहीं लिखा हुआ है कि इन्सान उन्नति करते-२ चमड़े के जूते पहन कर उस चाँद पर चढ़ जायेगा जिसको संसार देवता मानता है। इस संसार में सदैव परिवर्तन आते रहते हैं। आज दुनिया में अवगुणों और बुराइयों के भी नये-२ ढंग पैदा हो गये हैं, ठगी के भी अनेक

प्रकार के तरीक़े देखने में आ रहे हैं।

सन्तों की खोज ने यह साबित किया है कि यदि तुम मन के चक्कर में रहोगे तो जन्म-मरण के चक्कर से नहीं निकल सकते। जिसके अन्त समय पर राम या कृष्ण या कोई गुरु या किसी का कोई भी इष्ट आ जाता है अगर तुम यह कहोगे कि उसका दुबारा जन्म नहीं होगा तो यह बात ग़लत है, यह मेरी खोज (Research) है। मरते समय कई व्यक्ति यह कह गये कि बाबा फ़कीर उनके लिए हवाई जहाज़ या पालकी या घोड़ा लेकर उनको लेने के लिए आ गया है मगर मैं नहीं जाता और न ही मुझे ऐसे वाक्यात का ज्ञान आता है। तो इससे यह प्रमाणित हुआ कि जिस प्रकार की व्यक्ति की इच्छाएँ होती हैं वही उस समय उसके सामने फुरती हैं।

कल व्यास ने बताया कि उसने किसी गुरु से नाम लिया हुआ था तथा वह प्रकाश में शिवजी का ध्यान किया करता था। वह कहता है उसके अन्दर मेरा रूप प्रकट हुआ। सिर पर टोपी थी तथा कटी हुई दाढ़ी थी। प्रकाश में उसने यह रूप अपने अन्दर देखा। सच-झूठ उसके सिर पर है। मुझे मालूम नहीं और न मैं उसके अन्दर गया। यह बात अपने गुरु से बताई। उसने कहा तेरे अन्दर मुसलमान आ गया। तू बहुत गन्दा आदमी है, तू भ्रष्ट हो गया। वह इससे नफ़रत करने लगा। इस घटना के बाद मैं उस नगर में दौरे पर गया तो मेरा एक article (लेख) छपा और इसने पढ़ा। अब मैं सोचता हूँ कि मैं तो किसी के अन्दर नही गया। वह कौन था जो इसके अन्दर प्रकट हुआ। यहाँ आकर मेरी बुद्धि फेल हो गई मगर यह है मन का रूप। जिस प्रकार का प्राचीन जन्म का किसी पर संस्कार होता है उसके अनुसार व्यक्ति का इस जन्म पर

छूटना होता है। मनरूपी चक्कर से निकलने के लिए है — गुरु। पहले बाहर का गुरु है जो कि पूरी बात, राज़ और भेद समझा दे तथा फिर असली गुरु तुम्हारे अन्दर में शब्द है और वही नाम है। वेद उसको श्रुति और स्मृति मार्ग कहते हैं। श्रुति वह है जो सुनी जाती है। ऋषियों ने अपने अन्दर में जिस मरकज़ (केन्द्र) की धुन या राग या लय सुनी उसका संस्कार उनके दिमाग़ पर पड़ गया। पहले वह श्रुति थी फिर वह स्मृति बन गई। जिस तरह मातमी धुन सुनने से मातम का प्रभाव और इष्ट या गाने सुनने से उसका प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है ऐसे ही आन्तरिक आवाज़ का प्रभाव भी होता है। हमारे दिमाग़ में विभिन्न Centre (केन्द्र) हैं। जिस Centre की आवाज़ को कोई व्यक्ति सुनता है उसका प्रभाव उसके दिमाग़ पर पड़ जाता है। इसलिए इस दुनिया से पार जाने के लिए सन्तों ने शब्द की महिमा बताई है। प्रत्येक मरकज़ का शब्द अलग है। जहाँ तक मन का तबका है वहाँ तक के जो मरकज़ हैं उनका शब्द सुनने से आवागमन समाप्त नहीं होता। घण्टा और शंख की आवाज़ को सुनने वाले बहुत से व्यक्ति ऐसे हैं जिनका जीवन बहुत गन्दा है। वो चारसौबीस भी करते हैं, धोखा, फरेब और हेराफेरी करते हैं। अतः सन्तों ने असली शब्द जो नाम है उसकी महिमा गाई है :—

गुरु का दरस तू देख री, तिल आसन डार।

पहिले बाहरी योग्य गुरु का बाहर में दर्शन करो, उससे प्रेम करो। फिर उसे अन्दर में देखना पड़ता है मगर असली गुरु है शब्द :—

शब्द गुरु नित सुनो री, मिल वासन ज़ार।

उस असली गुरु के दर्शन तुम तब कर सकोगे जब तुम्हारे अन्दर मैल यानि वासनाएँ नहीं होंगी या शब्द

सुनने से इच्छाएँ मिल जायेंगी। जब तक मन शुद्ध (Purity of Mind) नहीं है तुम 'सार शब्द' को नहीं सुन सकते। जब तक किसी को सांसारिक इच्छा, लालच और धन से वैराग्य नहीं है वह बेशक सारा जीवन अभ्यास करता रहे वह 'सार शब्द' को सुन नहीं सकता :—

गुरु रूप सुहावन अति लगे, घट भान उजार।

गुरु का रूप क्या है ? कोई कहता है कि बाबे की दाढ़ी और मूंछ अन्दर में नज़र आती है, कोई कहता है कि हज़ूर बाबा सावन सिंह जी की पगड़ी और आँखें नज़र आती हैं। यह तो तुम्हारे मन का बनाया हुआ रूप है। असली गुरु का रूप है रोशनी या प्रकाश। यह है गुरु का रूप जो सुहावना लगता है। जिनको मुझसे तअस्सव है उनको तो मेरा रूप बुरा लगा होगा अगर अन्दर में नज़र आने वाला मेरा रूप ही गुरु होता तो फिर यह सब को सुहावना लगना चाहिए। असली गुरु का रूप है प्रकाश। वह तो सब को ही सुहावना लगता है चाहे कोई हिन्दु हो, चाहे मुसलमान हो, चाहे ईसाई हो :—

कमल खिलत सुख पावई, भौंरा कर प्यार।

जब यह दृश्य नज़र आयेंगे तो मन को आनन्द, प्रेम, सुख और शान्ति मिलेगी :—

गुरु ज्ञान न पाया हे सखी, जिन घर अंधियार।

जब तक तुम सत्संग से असली बात को नहीं समझोगे तब तक तुम्हारे अन्दर प्रकाश नहीं हो सकता :—

पूरा सतगुरु न मिला, भ्रमत भव जार।

पूरे ज्ञान के बिना मानव भ्रम में रहता है कभी राम को पूजा, कभी कृष्ण को पूजा, कभी बाबे फ़कीर को पूजा, कभी किसी को और कभी किसी को पूजा। बुद्धि निश्चयात्मक नहीं हुई :—

मैं तो सतगुरु पाइया, जाऊँ बलिहार।

जब बाहर का पूरा सतगुरु मिल जाता है तो वह यह ज्ञान दे देता है कि ऐ इन्सान ! असली सतगुरु प्रकाश है और सार शब्द है :—

ज्यों चकोर चन्दा गहे, रहौं रूप निहार।

जिस प्रकार चकोर चांद को देख कर खुश रहता है ऐसे ही व्यक्ति अपने अन्दर प्रकाशरूपी सतगुरु को देख मग्न रहता है :—

सतगुरु शब्द स्वरूप है रहूँ अर्श मंझार।
तू भी सुरत स्वरूप है रहो गुरु की लार।

यह हज़ूर महाराज राय सालिग राम जी की वाणी है जिन्होंने स्वामी जी महाराज की बहुत सेवा की है। उनकी वाणी में कहीं भी धोखा और फरेब नहीं है। वह लिखते हैं कि ऐ इन्सान ! तू सुरत स्वरूप है और सतगुरु या मालिक भी तेरे अन्दर तेरी खोपड़ी में रहता है, तू अपनी सुरत को उसके साथ मिला दे :—

नैनन में गुरु रूप है, तू नैन उघार,
सरबन में गुरु शब्द है, सुन गगन पुकार।
राधास्वामी कह रहे यह मारग सार,
जो जो माने भाग से सो उतरे पार।

यह इस संसार से पार जाने के लिए सन्तों की Research है। कलियुग में जहां और बुराइयां हैं वहां उसमें यह भी विशेषता है कि इसमें प्रत्येक काम बहुत जल्दी होता है। शास्त्र कहते हैं कि देवता भी कलियुग में चोला धारण करने के लिए तरसते हैं ताकि उनको जल्दी मुक्ति प्राप्त हो सके :—

कलि केवल इक नाम अधारा,
श्रुति स्मृति सन्तमत सारा।

कलियुग में नाम की महिमा है, प्रत्येक काम बहुत जल्दी होता है। पहले और प्रकार के हथियार थे अब एटम बम्ब और हाइड्रोजन बम्ब तैयार हो गये हैं। एक बम्ब से लाखों व्यक्ति मर जाते हैं। आदमी दो दिन में पृथ्वी से चाँद तक पहुँच जाता है। नाम क्या है? तुम्हारे अन्दर में शब्द है।

सबको राधास्वामी !

नोट :—१. इन्सान की तरक्की और कामयाबी का दारोमदार इसकी अपनी मानसिक शक्ति पर है। मालिक उनकी मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं। बरगद का छोटा सा बीज जिस वक्त ज़मीन के सीना को चाक करके बाहर निकलता है कुदरत की सारी ताक़तें इकट्ठी होकर उसे पल-पल और उभारने लग जाती हैं। और वक्त पाने पर वोही अकुर शानदार दरख्त की हैसियत में खड़ा होकर और सैकड़ों हज़ारों लोगों, जीव-जन्तुओं को अपने साया के नीचे आराम देता रहता है। इस कुदरती दृश्य से सबक लो और हिम्मत से काम करते रहो।

२. अगर तुम पर मालिक की दया न होती तो सत-पुरुष राधास्वामी दयाल के चरणों में आते कैसे? उनकी शरण में आना ही दया का यक़ीनी सबूत है।

३. तुम मालिक से मिलने के लिए एक क़दम आगे बढ़ो और वो हज़ार क़दम आगे बढ़ कर तुमको छाती से लगायेगा।

—दाता दयाल

सत्संग परमदयाल जी महाराज

10 - 2 - 1973

निर्वाण पद

लिख रे कोई बिरला पद निर्वाण,
तीन लोक में यह यमराजा, चौथे लोक में नाम निशान।
जाहे लखत इन्द्रादि थक गये, ब्रह्मा थक गये पढ़त पुरान।
गोरख दत्त वसिष्ठ व्यास मुनि, शम्भु थक गये धर-२ ध्यान,
कहें कबीर लखे कोई बिरला, जिन पायो सतगुरु का ज्ञान।

राधास्वामी! यह शब्द सुना। पहले भी सुना करता था। कौन हिन्दु या ब्राह्मण है जो इस प्रकार की वाणियाँ सुन कर दुःखी न होगा। मैं इस खोज के सिलसिले में जैसा कि कई बार कहा करता हूँ 'मौज अधीन' था। अपने कर्मानुसार हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज के चरणकमलों में गया था। गया तो मैं सनातन धर्म के संस्कारों के मुताबिक था कि वह मालिक इस दुनिया में अवतार लेकर आता है :—

नाना भांति राम अवतारा, रामायण शत कोटि अपारा।

उस पवित्र विभूति ने जिनको मैं मालिक का अवतार समझता था मुझे सन्तमत या कबीर मत या राधास्वामी मत की ओर बदला। उनकी वाणियाँ पढ़ा करता था और मेरे दिल में एक प्रबल जज़बा था कि उस निर्वाण पद को

देखूं, जिस के बारे कबीर साहिब ने फ़रमाया है। आयु गुज़र गई। अब निर्वाण का पता लग गया है। कल हनमकुण्डा से गोपाल नागोरी का पत्र आया। उसने मेरी प्रशंसा करते हुए मुझसे बहुत से प्रश्न पूछे। उसने लिखा है कि आपका रूप लोगों के अन्दर प्रकट होता है और आप फ़रमाते हैं कि आपको पता नहीं। आपको पता होना चाहिए।

ऐ धार्मिक और पन्थिक दुनिया वालो! मैं अगर कबीर साहिब के निर्वाण को समझ सका हूँ तो केवल इस एक विचार से कि मेरा रूप लोगों के अन्दर प्रकट होता है और मुझे मालूम नहीं होता। यह रूप कैसे प्रकट होते हैं :—

तीन लोक में यह यमराजा, चौथे लोक में नाम निशान,
जाहे लखत इन्द्रादि थक गये, ब्रह्मा थक गये पढ़त पुरान।

तीन लोक में यमराज है। यम कहते हैं खारिज होने, त्यागने या बाहर निकालने को। यम हमारा अपना ही मन है। एक ब्रह्माण्डी मन है। मैं अपने जीवन में समझ नहीं सकता था कि कबीर साहिब या राधास्वामी दयाल या दूसरे सन्तों को क्या अधिकार था या क्या अधिकार है कि उन्होंने सब का खण्डन किया :—

गोरख दत्त वशिष्ठ व्यास मुनि, शम्भु थक गये धर २ ध्यान,
कहें कबीर लखे कोई बिरला, जिन पायो सतगुरु का ज्ञान।

ये सब क्यों थक गये? ये जो रूप प्रकट होते हैं यह क्या है? कोई राम को मालिक समझ कर पूजता है, कोई कृष्ण को मालिक समझ कर पूजता है, कोई देवी या देवता को मालिक समझ कर उनकी पूजा करता है, कोई 'अह ब्रह्म' कहता है। जिसको कोई पूजता है वह तो उसके अपने मन का संकल्प है। ऐसे-२ केस मेरे पास बहुत आये हैं और प्रतिदिन आते हैं। यहाँ लोग यह कहते हैं कि मेरे रूप ने उनकी जाग्रत अवस्था में या उनकी समाधि में या उनकी

मरते समय मैं सहायता की। लेकिन मैं नहीं होता और न मुझे ऐसे वाक्यात का कोई ज्ञान होता है तो इससे मुझे यह विश्वास हो गया कि Universal mind यानि ब्रह्माण्डी मन चौदह लोक में बसता है। मन की लहरें प्रत्येक शरीर से निकलती रहती हैं और ब्रह्माण्ड में मौजूद रहती है। रेडियो के नियमानुसार यहाँ जिसको वस्तु की चाह होती है तो वह ख्यालात शक्लें बनाकर और संस्कार देकर उस व्यक्ति के अन्दर प्रकट होते हैं। चूंकि इस दुनिया में अच्छे ख्यालात भी तथा बुरे ख्यालात भी मौजूद रहते हैं इसलिए जिस प्रकार के ख्यालात का जोर होता है वो दूसरे ख्यालात को दबा लेते हैं। मैं इस बारे में रामायण का उदाहरण देता हूँ। जब राम को राजतिलक मिलने लगा तो देवताओं में खलबली मच गई कि रामचन्द्र जी यदि अभी से राजा बन गये तो रावण कैसे मरेगा और बुराई का नाश कैसे होगा ? उन्होंने योगमाया को भेजा। उसने मन्थरा जो कि नीच जाति की थी उसके दिमाग़ पर प्रभाव डाल कर कैकेयी को वर दिलाया और राम को बजाय राजतिलक के बनवास दिलाया गया।

गोपाल नागोरी ने यह प्रश्न किया है कि देश में भूख है, पीने को पानी नहीं मिलता, खाने को भोजन नहीं मिलता बुराइयाँ और लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं, देश में अशान्ति है। मैं कोई परमात्मा तो हूँ नहीं और न ही मुझे किसी बात का दावा है। ईर्ष्या, द्वेष, कीना, हेराफेरी और चारसौबीस वाले जितने अधिक व्यक्ति इस दुनिया में हो गये उनके उतने ही इस प्रकार के ख्यालात ब्रह्माण्ड में रहते हैं तथा वह दूसरे व्यक्तियों के दिमाग़ों पर प्रभावित होकर उनके अन्दर भी ऐसे ख्यालात पैदा कर देते हैं। यह त्रिलोकी का खेल है। यहाँ काल यानि मन राज करता है। Universal mind जो संसार का कर्ता पुरुष है यह जो कुछ हो रहा है

यह उसके संकल्प का परिणाम है, उसके संकल्प से ही सूर्य चान्द, सितारे पैदा होते हैं और आकाशी रचना बनती है। सूर्य, चान्द, सितारों की धाराओं या किरणों से इस सृष्टि की रचना में परिवर्तन होता रहता है। यह प्रकृति का भेद है जिस प्रकार के इन ग्रहों के प्रभाव होते हैं और जिन राशियों में यह खेल करते हैं उन राशियों पर इनका प्रभाव पड़ता है। हिन्दु शास्त्रों ने 'शिवसंकल्पमस्तु' की ताक़ीद की है। शास्त्र कहते हैं कि सदैव कल्याणकारी विचार रखो। मन, बचन और कर्म से शुद्ध रहो और स्वार्थ, ईर्ष्या व द्वेष इत्यादि को छोड़ दो क्योंकि हम लोगों ने वेदमार्ग जो सत्त सनातन धर्म है या सत्त मानवता धर्म है उसको छोड़ दिया है। इसलिए हमारे ही गन्दे विचार ब्रह्माण्ड में जाकर हमारे लिए दुःख पैदा करते रहते हैं।

कई बार सोचता हूँ कि हुज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे जगत् कल्याण का कार्य दिया था :—

तेरा रूप है अद्भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत् में आया, परम दयाल सनेही॥

सोचता हूँ कि मैं क्या कल्याण करूँ? यह भेद बताये जाता हूँ कि ऐ मानव! तेरे अन्दर जितने अच्छे या बुरे रूप-रंग या शक्लें पैदा होती हैं, Law of radiation है। यह प्रकृति का नियम है जो धाराओं और संस्कारों और Radiation के द्वारा एक-दूसरे का प्रभाव, एक-दूसरे को प्रभावित करता रहता है। इस विचार को लेकर मैंने जीवन के अनुभव के बाद मानवता की आवाज़ उठाई है। कबीर साहिब ने भी मानवता के बारे कहा है :—

गुरु पशु नर पशु त्रिया पशु वेद पशु संसार।
मानुस ताहे जानिये जा में बिवेक विचार॥

जब तक किसी व्यक्ति को समझ और विवेक नहीं

आता और भेद का पता नहीं चलता उसको अनाप-शनाप भक्ति से खुशी अवश्य मिलती रहती है मगर लाभ नहीं होता। रूप-रंग का पैदा होना सब Radiation है। लोग तो कहते हैं कि गुरु का रूप प्रकट होता है मगर नहीं। जैसे एक व्यक्ति ने एक रूपवती औरत को देखा या एक औरत ने किसी रूपवान् पुरुष को देखा उनके मनों में शक्लों का नक्शा बैठ गया तो दोनों को ही एक दूसरे की सूरत अन्दर में नजर आने लग जाती है।

ऐ गोपाल नागोरी ! तू ब्राह्मण है। संस्कारों के कारण तू कम्यूनिस्ट बन गया था। तेरे पिछले जन्म के संस्कार तुमको मेरे सम्पर्क में लाये। तुमने बहुत कुछ अनुभव कर लिया है। किसी ईसाई या मुसलमान को भी अपना दत्तक पुत्र बनाकर देख लिया। पिछले जन्म का जितना लेना-देना होता है वह भुगतान करना पड़ता है। अब यदि तुम अपना जन्म बनाना चाहते हो और यह चाहते हो कि तुम काल अर्थात् Radiation या गति के चक्कर से या ख्यालात के चक्कर से निकल जाओ और अपनी आद अवस्था अर्थात् जहां से तुम्हारी आद energy अर्थात् सुरत निकली है उसमें चले जाओ और अपने अन्दर प्रकाश और शब्द अर्थात् पारब्रह्म और शब्दब्रह्म की ओर ध्यान दो ताकि तुम्हारा यह जन्म सफल हो जाये। दुनिया तो ऐसे ही चली आ रही है इसका सुधार कोई नहीं कर सका। लाखों धर्म और लाखों गुरु यहाँ आये और अपना-२ काम कर रहे हैं मगर फिर भी देखो दुनिया में क्या हाल हो रहा है।

ऐ नागोरी ! तू मुझे बाप समझता है अगर तुमको यह कह दूं कि ऐ बाबले बच्चे ! तू अपना जन्म बना और अपने अन्दर प्रकाश और शब्द का साधन कर। इससे अधिक मैं और कुछ नहीं कहना चाहता। अगर हो सके और जेब में

आने-जावे का खर्च हो तो बैसाखी पर आ जाना।

यह सत्संग पढ़ने के बाद भाई नन्दू सिंह जी महाराज को भेज देना ताकि वह इसको 'दयाल' और 'मनुष्य बनो' में प्रकाशित करवा देवें।

सबको राधास्वामी !

नोट :—(१) दुनिया में प्रेम की हज़ारों और लाखों शक्लें हैं—दोस्त-२ का प्रेम, बाप-बेटे का प्रेम, भाई-भाई का प्रेम, स्त्री-पुरुष का प्रेम कोई कहाँ तक इनकी गिनती गिना सकता है। अगर किसी इन्सान को शेर या भेड़िये के साथ सच्चा प्रेम हो जाये तो यह दरिंदे भी अपनी कुदरती फितरत भुला कर उससे प्रेम का बर्ताव करने लग जायेंगा।

(२) ईश्वर की पूजा लोग खुदगरज़ी के ख़्याल से करते हैं। कोई दौलत माँगता है, कोई औलाद की ख़्वाहिश रखता है, कोई इज़्ज़त, हकूमत का सौदाई बना हुआ है, कोई सिद्धि-शक्ति हासिल करने के लिए सख्त से सख्त मेहनत कर रहा है। सोचो तो सही यह ईश्वर के प्रेमी हैं या दौलत, औलाद और इज़्ज़त, हकूमत के प्रेमी हैं।

(३) ईश्वर को सिर्फ वो ही पा सकता है जो इसका सच्चा प्रेमी है और इसकी याद में दिन-रात मस्त रहता है। यह ईश्वर के हैं और ईश्वर इनका है। बाकी और लोगों को खुदगरज़ ही समझो।

(४) भक्ति एकरस होनी चाहिए जो बदलती रहती है वह भक्ति नहीं है।

—दाता दयाल

सत्संग परमदयाल जी महाराज

11-2-1973

गुरु-कृपा

गुरु के दरसन करने हम आये अब दूर से,
दीन अनाथ भिखारी दर के हुये मंगता हम धुर घर के।
गुरु मिलावे मूर से।
और आस विश्वास न कोई चरण गुरु के पकड़े सोई,
वही छुड़ावे कूर से।
सुरत डोर चरणन में लगी चित्त चंचलता सब ही भागी,
बही लगावे तूर से।
अनहद बाजे बजें गगन में सुरत चढ़ी और लगी धुन में,
दृष्टि मिली अब नूर से।
कायरता अब मन से भागी, सुरत शब्द में छिन-२ लागी,
डरे काल गुरु सूर से।
सहसकमल तज त्रिकुटी आई, सुन्न परे महासुन्न चढ़ाई,
भेद मिला गुरु पूर से।
भँवर गुफा का ताला तोड़ा अमर नगर जा सुरत को जोड़ा,
मिल गई सत्त ज़हूर से।
अलख पुरुष की प्रीत समानी अगम लोक या बैठक ठानी,
हुई पावन गुरु धूर से।
राधास्वामी चरन तुम्हारे, लगे मोहे अब अतिकर प्यारे,
आरत करूँ शऊर से।

राधास्वामी ! बचपन से मेरे अन्दर कोई खोज थी और अब भी है। जिस वस्तु को मैं ढूंढता हूँ या उसको राम या मालिक समझता था उस खोज में मैं रोया करता था। मेरा भाग्य या मौज या भगवान् की इच्छा मुझ को एक दृश्य द्वारा हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज जिनका यहाँ Statue अर्थात् मूर्ति है उनके चरणों में ले गई। उन्होंने मुझे सन्तमत, कबीरमत, राधास्वामी मत या नानकमत का संस्कार दिया और अपने अन्दर में मालिक से मिलने का मार्ग बताया। आयु बीत गई। कोई दावा नहीं कि जो कुछ मैंने समझा है यह ठीक है। भिन्न-२ प्रकार की वाणियों की समझ नहीं आती थी। मैं भ्रम में था और हजूर दाता दयाल जी महाराज से पुकार किया करता था और अब भी किया करता हूँ। उस समय मैंने प्रण किया था कि इस रास्ते पर चलने से जो कुछ मुझे अनुभव होगा वो संसार को बता जाऊँगा। ऐ संसार वालो ! हो सकता है कि मेरा अनुभव ग़लत हो। अब यह शब्द पढ़ा गया :—

गुरु के दरसन कारने हम आये अब दूर से।

मैं बसरे-बग़दाद से अवकाश लेकर कभी लाहौर, कभी राधास्वामी धाम दर्शन करने के लिए जाया करता था। क्या उस दर्शन करने से या बाहर के दर्शन करने से जिस वस्तु की मुझे खोज थी वह मिल गई ? इससे मुझे प्रसन्नता मिली, आनन्द मिला, प्रेम मिला, मान और इज़्ज़त मिली मगर वह चीज़ नहीं मिली। सुरत कुछ चाहती थी। स्वामी जी महाराज की वाणी में आता है कि :—

सुरत सुन बात री, तेरा धनी बसे आकाश री।

आकाश ऊपर है। एक आकाश हमारे दिमाग़ में ऊपर का भाग है और एक आकाश तत्त्व है। मैं अपने अन्दर में चलने का प्रयत्न करता रहता हूँ। मैंने हजूर दाता दयाल

जी महाराज से प्रेम किया। उन्होंने अभ्यास करने को कहा। मैं स्पष्ट इसलिए कह रहा हूँ कि लोग मुझे गुरु समझते हैं तथा दूर-२ से मेरे पास आते हैं। मैं अपनी आत्मा को साफ़ रखना चाहता हूँ ताकि मेरे गुरु बनने का यदि कोई पाप हो तो वह मेरे लिए हानिकारक न हो।

सन्तों की अनुभवी वाणी के सिवाय सन्त के और कोई नहीं समझ सकता। दूसरे व्यक्ति उसके अर्थ के अनर्थ कर देते हैं। इस वाणी में आया है कि हम दूर से गुरु के दर्शन करने आये हैं। दूर क्या है? गुरु तो हमारी खोपड़ी में रहता है, सुरत नीचे से उसके दर्शन करने के लिए ऊपर जाती है। तुम लोग आ जाते हो, मैं समझता हूँ कि तुम लोगों को इस शिक्षा की आवश्यकता नहीं बल्कि आपको तो दुनिया चाहिए। तुम्हारा भी दोष नहीं। मैं स्वय दुनिया के चक्कर से छूटा नहीं हूँ। किसी को ज्यादा चक्कर है और किसी को कम। मुझ पर हजूर दाता दयाल जी महाराज की कृपा है, रोटी का सामान है और सेवा करने वाले भी हैं इसलिए मैं बहुत कम दुःख अनुभव करता हूँ। मगर आम गृहस्थियों के वश की यह बात नहीं है। मेरे पास प्रतिदिन लोग आते हैं तथा पत्र भी आते हैं। किसी को कोई दुःख है और किसी को कोई। जिसको यह विश्वास हो जाता है कि इस संसार में किसी को भी सुख नहीं है तो फिर वह सुख की खोज करता है। ऐसे व्यक्तियों के लिए सन्तमत है, आम जनता के लिए नहीं। आम जनता के लिए वेदमार्ग है 'शिवसंकल्पमस्तु'। जो कुछ उसको मिलता है यह उसके कर्म का फल है, मेरी तो आँखें खुल गईं। जिस दुनिया में हम रहते हैं यह काल यानि ईश्वर को दुनिया है। यहाँ सकल्प, वासना या आशा काम करती है। जब मैं देखता हूँ कि ईश्वर के बड़े-२ भक्तों और सेवकों का क्या हाल हुआ

और बहुत से सन्तों ने अपनी अन्तिम आयु में बहुत दुःख उठाये। मैं सोचता हूँ कि ईश्वर के बड़े-२ भक्तों को इतना शारीरिक कष्ट क्यों हुआ? या तो यह मानना पड़ेगा कि ईश्वर बड़ा ज़ालिम है जिसने अपने भक्तों को भी दुःख दिया और अगर यह नहीं मानते तो फिर यह मानना पड़ेगा कि उनको उनके अपने कर्म के फल की यह सज़ा मिली। इसलिए मैंने गुरु पदवी पर आकर पर्दा नहीं रखा और बिलकुल सच्चाई बताई है। अगर पर्दा रखता तो आज मैं भी दूसरे महात्माओं की तरह लाखों का मालिक होता। लोगों के अन्दर मेरा रूप प्रकट होता है। किसी को मरते समय ले जाता है, किसी को औषधि बता देता है, किसी को पुत्र दे जाता है, किसी के पेपर हल करा देता है मगर मैं नहीं होता और मुझे कोई अहम् भी नहीं होता। इसलिए मैं डर गया कि अगर कोई कर्म का ही फल है तो झूठी इज़्ज़त और झूठी दौलत के लिए क्यों झूठ बोलूं और अपने कर्म को क्यों खराब करूँ? इसलिए मैंने बिलकुल स्पष्ट कहा है कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता :—

दीन अनाथ भिखारी दर के, हुए मंगता हम धुर घर के,
गुरु मिलावें मूर से।

अब गुरु ने मुझे मूर से कैसे मिलाया? जब से मुझे आप लोगों से पता लगा कि मेरा रूप आप लोगों के अन्दर प्रकट होता है तथा मैं नहीं होता तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्दर भी जितने रूप-रंग या बातें अच्छी या बुरी पैदा होती हैं यह मेरे अपने मन की आशाएँ हैं। इसलिए अब मैं मन की आशाओं को छोड़ कर केवल प्रकाश और शब्द में रहने की कोशिश करता रहता हूँ। शास्त्रों के अनुसार भी आकाश का गुण सबसे बड़ा माना जाता है और वह है शब्द। और विज्ञान भी Light and Sound से इस सृष्टि की उत्पत्ति

मानता है। हमारा धनी शब्द है जिसको राधास्वामी मत नाम या सत्तनाम कहता है। चाहता तो हूँ कि जब उसमें चला जाऊँ तो फिर वापिस न आऊँ मगर वहाँ ठहरा नहीं जाता। वापिस आने में क्या दुःख है? अब बूढ़ा हो गया हूँ, कभी पेट में दर्द है, कभी पेशाब का रोग, कभी कोई रोग है इसलिए चाहता हूँ कि शरीर को छोड़ जाऊँ मगर अपने वश की बात नहीं है। जब तक शरीर है तब तक यह पुकार बनी रहेगी कि अपने घर चला जाऊँ और वापिस न आऊँ मगर वहाँ ठहरा नहीं जाता :—

और आस विश्वास न कोई, चरन गुरु के पकड़े सोई
वही छुडावे कूर से।

देखो, तुम लोग मुझे गुरु मानते हो अगर मैं स्पष्ट नहीं बताता और तुमको अपने जाल में फँसाने के लिए अपने शरीर की महिमा जताता हूँ कि मेरे चरण पकड़ो तो मैं अपराधी हूँ। गुरु शब्द स्वरूप है, उसके चरण प्रकाश हैं। और यही हज़ूर मुअल्ला मुकद्दस राय सालिग राम साहिब ने अपनी वाणी में लिखा है 'कूढ़ है झूठ'। मेरे मन के अन्दर जो रूप प्रकट होते थे कभी किसी महात्मा का रूप आ गया, कभी कोई देवता आ गया इत्यादि। मैं उनको सत्य मान कर उनके पीछे दौड़ता था मगर वह तो कूढ़ था, धोखा था। इस धोखे से कौन छुड़ा सकता? गुरु के चरण अर्थात् प्रकाश। जब सुरत दसवें द्वार से आगे चली जायेगी तो फिर तुम्हारे अन्दर कोई शकल नहीं बनेगी और तुम कूढ़ से बच जाओगे। कूढ़ स्वयं समाप्त हो जायेगा। तुम लोग सारी आयु बाहरी गुरु के चरणों में ही फँसे रहे और कूढ़ से न निकल सके। कोई कहता है कि हज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज आ गये, कोई कहता है कि सन्त कृपाल सिंह जी आ गये हैं, कोई कहता है कि बाबा फ़कीर आ गये। अरे! यह तो सब

कूढ़ है। कल अमेरिका से एक पत्र आया जिसमें लिखा है कि मैंने आपको अपने साधन में देखा। लेकिन जब मैं नहीं गया तो मैं कैसे झूठ बोलूं कि मैं गया था। इन धर्म और पन्थ वालों ने हमको अज्ञान में रख कर बहुत लूटा है। अगर हम अपनी यह कमाई जो हमने खून और पसीना एक करके कमाई है किसी दुःखिये की सेवा में लगाते तो हमको सहस्रगुणा इसका फल मिलता। तुम लोग गुरु को इसलिए देते हो कि उसका रूप तुम्हारे अन्दर प्रकट होता है। अरे! यह तो सब धोखा है। इस दशा को देखकर मैं अनामी धाम से फ़कीर के चोले में इस संसार में प्रकट हुआ कि संसार को वास्तविकता बता जाऊँ ताकि दुनिया इस लूट से बच जाये:—

जग में घोर अंधेरा भारी, तन में तम का भण्डारा।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति देखा, भूल भुलैया धर मारा॥

मैं यह चाहता हूँ कि दुनिया को राधास्वामी मत की सच्ची तालीम बता जाऊँ। पैसे की तो मुझे भी आवश्यकता है। मैं भी इससे बरी नहीं हूँ क्योंकि यहाँ मन्दिर है, अस्पताल है, गरीबों की सहायता होती है, यतीम बच्चों का पालन-पोषण होता है, गरीब बच्चों की शिक्षा पर खर्च होता है। मगर मैं आप लोगों की आँखों में मिट्टी डाल कर तुम लोगों से पैसा लेना नहीं चाहता। ज्ञान की दृष्टि से मेरी शिक्षा के फैलाने और गरीबों की सहायता के लिए यदि आप कोई सहायता कर सकते हैं तो बड़ी खुशी से कीजिये। आपको मुबारिक है।

कूढ़ से तुमको प्रकाश छुड़ायेगा। जब प्रकाश में तुम्हारी सुरत चली जायेगी तो तुम वास्तविकता को समझ कर मन के चक्कर में नहीं आओगे:—

सुरत डोर चरनन में लागी, चित्त चंचलता सब ही भागी,
वही लगावें तूर से।

मैंने बाहरी गुरु की बहुत सेवा की, बहुत प्रेम किया और उनके चरणों में सुरत को लगाया, मगर मेरे मन की चंचलता नहीं गई। जब तक तुम्हारी सुरत प्रकाश को नहीं पकड़ेगी तुम्हारि मन की चंचलता जा नहीं सकती। पहले सुरत शरीर से निकले, फिर मन से निकले, फिर आगे प्रकाश में जायेगी :—

अनहद बाजे बजें गगन में, सुरत चढ़ी और लागी धुन में,
दृष्टि मिले अब नूर से।

जब सुरत प्रकाश में पहुँच जाती है तो फिर उसके बाद शब्द या नाम या सत्तनाम आता है। तुम लोग सारी आयु गुरु की दाढ़ी, मूँछ, पगड़ी या टोपी को ही देखते रहे, यह सब माया का चक्कर है। हाँ, जिनको माया की आवश्यकता है वह इस रूप से अपनी दुनिया बना सकते हैं। चाहे राम का रूप बनाओ, चाहे कृष्ण का रूप बनाओ और चाहे गुरु का रूप बनाओ लेकिन एक का रूप बनाओ। इससे तुम्हारी इच्छाएँ पूर्ण होती रहेंगी और सिद्धिशक्ति भी आ सकती है मगर तुम अपने घर नहीं पहुँच सकते। घर पहुँचने का साधन केवल शब्द और प्रकाश है। गरुड़ पुराण में भी यही लिखा है कि अगर कोई व्यक्ति हमेशा के लिए जन्म-मरण से बचना चाहता है तो उसको गुरु स्वरूप का ध्यान करते हुए और गायत्री मन्त्र का जाप करते हुए शब्दब्रह्म और पारब्रह्म से आगे जाना पड़ेगा। इसलिए मैं कहा करता हूँ कि राधास्वामी मत और सनातन धर्म की शिक्षा में कोई अन्तर नहीं है :—

कायरता अब मन से भागी, सुरत शब्द में छिन छिन लागी,
डरे काल गुरु सूर से।

कायरता है भय। भय सदैव विचार या मन से होता है। शब्द और प्रकाश में जाने से कायरता समाप्त हो जाती है। काल है मन। जब तुम मन से आगे चले जाओगे तो फिर डर कैसा ? 'सतगुरु खड़ा है'

हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज ने भी सारी आयु यही कहा 'नौ द्वार पार करो तो आगे सतगुरु खड़ा है' मगर किसी ने इस बात को समझा नहीं। दुनिया तो यही समझती रही कि आगे उनका दाढ़ी वाला और पगड़ी वाला स्वरूप होगा। यहाँ आकर सारी दुनिया भूल गई और सब चक्कर में रहे तथा निकल न सके। पूर्ण गुरु के बिना वह पार नहीं जा सके। इसीलिए बार-२ कहा जाता है 'पूरा सतगुरु खोज रे तेरे भले की कहूँ'। तुम तो गुरु उसको मानते हो, जिसके पीछे १०-१५ हजार व्यक्ति लगे हुए हों। अतः तुम भूल में हो। यह रूप-रंग जो अन्दर में प्रकट होते हैं यह तुम्हारे विश्वास का परिणाम है। असली गुरु है, ज्ञान और यह किसी बाहरी योग्य पुरुष के वचन सुनने, गुनने और मनन करने से मिलेगा। इसलिए सन्तमत में बाहर के पूरे गुरु के दर्शन और उसके वचनों को सुनना आवश्यक है :—

सहस्रकमल तज त्रिकुटी आई, सुन्न परे महासुन्न चढ़ाई,
भेद मिला गुरु पूरे से।

हजूर महाराज जी को पूरे गुरु से क्या भेद मिला, यह वह ही जानते होंगे। मुझे जो भेद मिला वह यह है कि सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भँवर गुफा यह हमारे जीवन के मानसिक और आत्मिक बोधभान हैं, उनकी चेतनाएँ हैं मगर अब मुझे यह समझ आई है कि यह सब काल और माया है। अगर किसी को यह समझ आ जाये तो फिर उसको इन दर्जों में साधन करने की कोई आवश्यकता नहीं, वह सीधा शब्द और प्रकाश को पकड़ सकता है।

कुछ समय पहले मैं महतपुर सत्संग कराने गया। वहाँ एक डाक्टर जो कि बाबा जगत सिंह जी का शिष्य है उसने मेरा सत्संग सुना और कहा कि बाबा जगत सिंह जी ने फ़रमाया था कि इस समय तक सन्तों ने यहाँ तक अपनी खोज बयान की है। भविष्य में आने वाले सन्त उससे आगे बतायेंगे। श्री काशी नाथ प्रधान गोरखपुर वाले ने एक बार मुझे बताया था कि हजूर दाता दयाल जी महाराज ने फ़रमाया था कि भविष्य में सन्त अभ्यास को सीधा ही सोहंग से प्रारम्भ करेंगे। मिस्त्री भान सिंह साकन घुमान ने बताया कि अभी वह नौजवान था तो बाबा जैमल सिंह जी महाराज के सत्संग में जाया करता था। उन्होंने फ़रमाया कि एक समय आयेगा जब पंजाब में आग बरसेगी, उसके बाद जो सन्त सतगुरु दुनिया में आयेगा वह किसी को नाम नहीं देगा और न ही लोगों को शिष्य बनायेगा। वह अपने वचनों और अपनी दृष्टि से जीवों का उद्धार करेगा। इन तीन बातों से मुझे हौसला हो गया कि मैंने जो कुछ अनुभव किया है, वह उचित है।

प्रत्येक बात प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार कही जाती है और समय के अनुसार होती है :—

सहस्रकमल तज त्रिकुटी आई, सुन्न परे महासुन्न चढ़ाई,
भेद मिला गुरु पूर से।

हो सकता है कि मैं ग़लती पर हूँ इसलिए मैं नहीं कहता कि आप मेरी बात को अवश्य सुनो। मेरे ज़िम्मे तो निबल, अबल, अज्ञानी जीवों की सहायता और जगत् कल्याण का काम करने की एक ड्यूटी थी और मैंने अपनी नीयत से उसको पूरी सच्चाई से निभाया है। मुझे यह परवाह नहीं है कि कोई इस पर अमल करे या न करे। मेरी समझ में यह आया है कि पूरा गुरु वह है जो पूरा भेद

और पूरा ज्ञान दे। तुमको जो कुछ मिलता है वह तुम्हारे कर्म, अमल और साधन का फल मिलता है :—

भँवर गुफा का ताला तोड़ा, अमर नगर जा सुरत को जोड़ा,
मिल गई सत्त ज़हूर से।

क्या भँवर गुफा में कोई ताला लगा हुआ है? ताला तोड़ने का अर्थ है किसी बात को समझना, किसी उलझन से निकल जाना। मेरा ताला तुम लोगों ने तोड़ा है। दया तो हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की है। उन्होंने सन् १९१९ में फ़रमाया था कि फ़कीर तुम में ९९ दोष हो सकते हैं मगर एक सबसे बड़ा गुण है कि तुम सच्चाई-पसन्द हो। मेरी आज्ञा मानो तुमको राधास्वामी दयाल के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे और अब वह हो गये। जब से मुझे यह मालूम हुआ कि मेरा रूप लोगों के अन्दर प्रकट होता है तथा मैं नहीं होता तो मैं अपने अन्दर जाने के लिए, अपनी फरदीयत (स्वयं) को गुम करने के लिए विवश हो गया। मैं अपने आपको शब्द और प्रकाश में लय करने का प्रयत्न करता रहता हूँ मगर गिरता रहता हूँ। जब तक 'मैं' है तब तक 'तू' है जब 'मैं' और 'तू' खत्म हो गई तो शेष क्या रह जाता है? बुल्लेशाह ने कहा है :—

मेरी गई गवाची मैं, ओ मैंनू की होया,
ओह मैं विचों निकली ते, ओ मैंनू की होया।

जब यह अवस्था आ जाती है तो फिर वह प्रकाशमय हो जाता है और दायम और कायम हो जाता है। अब सत्तलोक के बारे में क्या समझाऊँ? यूँ मानो कि बैटरी में से करंट निकली और अपना सर्कट पूरा करके वापिस उसी स्थान पर आ गई। लेकिन जब तक करंट निकलती है तब तक 'मैं' मौजूद है लेकिन जब सर्कट पूरा हो जाता है तो वह वापिस बैटरी में आ जाती है। इसी तरह हमारी 'मैं'

वहाँ से आई हुई है। यहाँ आकर हम चक्कर में फँस गये। गुरु मिले तो उन्होंने भेद बताया ताकि हम हमेशा के लिए इस चक्कर से निकल जायें। यह है सत्तपद :—

अलख पुरुष की प्रीत समानी, अगम लोक या बैठक ठानी,
हुई पावन गुरु धूर से।

पावन का अर्थ है पवित्र। न 'मैं' का मैल रहा और न 'तू' का बल्कि पवित्र हो गई। वह है हमारी जात। हम वहाँ से आये हैं तथा वहाँ ही हमने वापिस जाना है :—

राधास्वामी चरन तुम्हारे, लगे मोहे अब अतिकर प्यारे।
आरत करूँ शऊर से।

अब मुझे मालिक का पता लग गया इसलिए अब मैं किसी जज़्बे में आकर या अज्ञान से आरती नहीं करता। अब मैं अक़ल से आरती करता हूँ। मैं तो ऊँचा चला गया। आप गृहस्थी हैं। यह संसार कर्म का क्षेत्र है यहाँ कर्म काम करता है और कर्म का सम्बन्ध नीयत से है इसलिए अपनी नीयत को साफ रखो, किसी के साथ हेराफेरी मत करो, किसी का मन मत दुःखाओ, कोई ऐसा काम मत करो जिससे दूसरे को हानि हो तथा दूसरे के दिल को चोट लगे। अपने घरों में शान्ति रखो तथा विषय-विकार को कम करो :—

जहाँ काम तहाँ नाम नहीं, जहाँ नाम नहीं काम,
रवि रजनी दोऊ न मिलें, इक ठौर इक जाम।

जो अधिक विषयी है और अपने ब्रह्मचर्य को खोता है वह कभी शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता। सन्तान कम पैदा करो। हम लोग सन्तान तो पैदा करते हैं लेकिन यह नहीं सोचते कि इसका आगे चलकर क्या हाल होगा। इसको T.B. होगी या कोई हादसा होगा या ग़रीबी से दुःखी होगी या किसी और बीमारी में फँसेगी। हमारे अन्दर वासना है इस वासना के प्रभावाधीन हम अपनी दुनिया

बनाते हैं। हम सोचते तो यह हैं कि इससे हम सुखी हो जायेंगे लेकिन उलटा दुःख उठाते हैं। मेरे पास प्रतिदिन लोग आते हैं और पत्र आते हैं, किसी को कोई दुःख है, किसी को कोई। मुझे कोई दावा नहीं कि जो कुछ मैंने समझा है यह ठीक है। हो सकता है यह ग़लत हो। मेरे ज़िम्मे तो एक ऋण था तथा कुछ मेरे प्रारब्ध कर्म थे जो मैंने यह किया। मैं तो मालिक को मिलने निकला था। मौज मुझे सन्तमत में ले आई। इस मत की वाणी में सब का खण्डन था कि वसिष्ठ भी भूल गया, ब्रह्मा भी भूल गया या व्यास भी भूल गया। इस समय मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव संसार को बता जाऊंगा। इसलिए अपने कर्मानुसार यह काम करता हूँ लेकिन मुझे किसी बात का दावा नहीं है।

सब को राधास्वामी !

नोट :—(१) एक आदमी अपनी हालत को ख़राब और दूसरे की हालत को बेहतर और आनन्दमयी समझता है। सोचने की बात है कि वाक़ई असलियत क्या है? ख़ूब ग़ौर करने पर पता लगेगा कि न दोनों ही सुखी हैं और न दोनों ही दुःखी हैं। अपनी-२ नज़र और अपना-२ दिल।

(२) प्रेम में लेने का सवाल नहीं होता बल्कि देने का सवाल रहता है। तुम बच्चे को प्यार करके उसे देते ही रहते हो उससे कुछ लेने की ख़्वाहिश तो नहीं रखते। यही हाल हर जगह है।

—दाता दयाल

सत्संग परमसन्त मानव दयाल

डाः ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

हजूराबाद 28-1-85

मानवधर्मस्य धातारं दाता दयालस्य प्रियतमम् ।
सन्तधर्मस्य गोप्तारं फकीरं वन्दे जगद्गुरुम् ।।
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।

राधास्वामी !

परम आदरणीय आनन्दराव जी महाराज, मेरे परमप्रिय सत्संगी भाई और बहनो, मैं जिस आनन्द से आनन्दराव जी महाराज के सत्संग में मौन था वह टूट गया क्योंकि उन्होंने मुझे बोलने के लिए समय दे दिया। वास्तव में मेरे मन में यह आया था कि आज मैं सत्संग और सत्पुरुष के बारे में कुछ कहूं और यही नारद वाला दृष्टान्त मेरे मस्तिष्क में घूम रहा था जो महाराज जी ने सुना दिया। हमारा ऐसा अन्दर से अन्दरूनी तारतम्य होता है कि वहाँ टेलीफोन की जरूरत नहीं होती है। सन्तों में तो टेलीपैथी चलती है। यदि आपको किसी से सच्चा प्रेम है तो उसके बारे में आपको ज्ञान हो जायेगा। जब आम व्यक्ति को प्रेम के कारण ज्ञान हो जाता है तो सतगुरु के साथ प्रेम रखने से वह ज्ञान आपको आयेगा या नहीं ? निश्चित रूप से

आयेगा। सतगुरु की दृष्टि से तो मिलता ही है लेकिन जब आप सत्संग में बैठते हैं तो सतगुरु से सब कुछ मिलता है। सन्तमत की सबसे बड़ी देन सत्संग है। सत्संग में ही सत्पुरुष से सम्बन्ध होता है। ख़ासकर सन्तमत, राधास्वामी मत, मत की दृष्टि से है।

मत का मतलब है कि सन्तमत में ही या राधास्वामी मत में ही सन्तों ने अवतार लेकर के हमें मालिक से मिलने का सीधा तथा सरल से सरल तरीक़ा बताया है। मैंने जो आपके सामने मंगलाचरण रखा है :—

'ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः'

ध्यान का मूल आधार है, गुरु की मूर्ति जिस पर ध्यान लगाते हैं। गुरु का मतलब परमतत्त्व मालिक। कमाल की बात है कि सतयुग में भी ध्यान से ही मुक्ति मिलती थी, मालिक का दर्शन मिलता था। मनु और शतरूपा ने मालिक को मिलने के लिए हज़ारों साल ध्यान लगाया, तपस्या की। मैं यह बताना चाहता हूँ कि राधास्वामी मत, सत्यता का धर्म, मानवता का धर्म इस युग में क्यों महत्त्व रखता है? मैंने कई बार कहा कि राधास्वामी मत सनातन धर्म की आख़िरी कड़ी है क्योंकि इसके अन्दर वह सब चीज़ संक्षेप में मौजूद है जो सतयुग में, त्रेतायुग में और द्वापर युग में थी। वह सभी अनुभव सरलता से, सुगमता से, सत्संग में आने से, सत्पुरुष के मिलने से हो जाते हैं। यह युग ही ऐसा है। जब कि मनु, शतरूपा ने हज़ारों साल तपस्या की। जब भगवान् प्रकट हुए तो कहा 'मांगो, तुम क्या चाहते हो''? मनु और शतरूपा ने कहा "हम आप जैसा पुत्र चाहते हैं।" भगवान् ने कहा "त्रेतायुग में जब तुम दशरथ और कौशल्या बनोगे तब मैं तुम्हारे घर जन्म लूंगा।" अब त्रेतायुग तक का इन्तज़ार कौन करे। किसी शायर ने कहा है :—

हूरों का करे इन्तज़ार कौन हश्र तक,
मिट्टी की भी मिल जाये, रवा है शबाब में।

इस ज़माने में युगों तक बैठकर कौन ध्यान कर सकता है ? कौन तपस्या कर सकता है ? लेकिन सन्तमत कहता है कि गुरु का ध्यान सरल तथा तुरन्त फल देने वाला है। यदि सत्पुरुष के देखने से, ध्यान से, दृष्टि से जन्म-मरण बदलते रहते हैं तो सत्पुरुष के सम्पर्क से मनुष्य ऊपर ही जायेगा। सन्त भी कहता है कि हम तो आपको फ़कीर बनाकर ही छोड़ेंगे।

मैं कह रहा था कि मालिक को कोई धोखा नहीं दे सकता है। यदि सन्त धोखा देता है और सच्ची बात नहीं कहता है तो वह अपने आपको धोखा देता है। एक कहानी याद आ रही है :—

किसी आदमी ने खुदा की पूजा की। जब खुदा सामने आया तो उस आदमी ने कहा "मालिक आपके लिए तो लाखों करोड़ों वर्ष एक क्षण के बराबर हैं, और आपके लिए करोड़ों रुपये एक पाई के बराबर हैं। आप मुझे एक पाई दे दो।" खुदा ने कहा "एक क्षण इन्तज़ार कर ले"। तो मालिक को कोई धोखा नहीं दे सकता है। मैं आपको सही बता रहा हूँ कि मैं पहले सन्त नहीं हुआ था लेकिन आप लोगों ने मुझे सन्त बना दिया। महाराज जी ने मुझे क्यों आज्ञा दी कि मैं आपको सत्संग कराऊँ ? क्योंकि मैं हर सत्संग के अन्दर देखता हूँ कि मैं कितनी गहराई तक अन्दर चला जाता हूँ। आपका विश्वास बहुत चमत्कार कराता है। अगर आपको मेरे में विश्वास है तो क्या मैं अपने गुरु में विश्वास करके उनके काम को करने के लिए 'मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्' मानूँ कि नहीं मानूँ ! अगर कोई आदमी धोखे से भी कहता है कि मैं तेरा गुरु हूँ या हो गया तो उसमें भी उसको ज्ञान मिलेगा। मेरे जीवन में लगातार ऐसी घटनाएँ घटी हैं। मैं ऐसी-२ जगहों पर भी गया जहाँ कोई अच्छा

आदमी मिले ही नहीं लेकिन मुझे वहाँ पर सन्तगति वाले लोग मिले। मुझे एक कहानी याद आ रही है :—

एक राजा था। उसके एक लड़की थी जो विवाह के योग्य थी। रात को राजा अपनी रानी से कह रहा था कि हमारी लड़की विवाह के योग्य हो गई है। मैं चाहता हूँ कि इस लड़की के लिए ऐसा वर मिले जो ज्ञानी हो, संन्यासी हो। मैं उसके साथ लड़की का विवाह करके राजपाट उसे दे दूंगा और हम जंगल में चले जायेंगे। इसी दौरान चोर राजा की तिजौरी से हीरे-जवाहरात निकाल रहे थे। जब चोरों ने राजा की बात को सुना तो चोरों ने सोचा कि हम हीरे-जवाहरात लेकर क्या करेंगे। चोरों ने हीरे-जवाहरात सब तिजौरी में रख दिये और तीनों बाहर आ गये। उन तीनों चोरों में से एक ने दाढ़ी बढ़ा ली, भगुआ कपड़े पहन लिए। शहर के बाहर एक मकान ले लिया। अन्य दो चोरों ने नकली बने हुए महात्मा का प्रचार करना शुरू किया "ये हमारे गुरु जी हैं बड़े पहुँचे हुए महात्मा हैं। बड़े चमत्कारी हैं। इनसे जो माँगोगे मिल जायेगा। सभी इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी।" अब उन महात्माओं के पास लोग आने लगे। लोगों की इच्छाएं पूरी होने लगीं। अब वह साधु कुछ ज्ञान की भी बातें करने लगा। राजा ने भी सुना कि बड़ा अच्छा संन्यासी है बड़ा चमत्कारी है, लोगों की इच्छाएं पूरी होती हैं। राजा भी वहाँ गया और उस महात्मा की बातों से बड़ा प्रभावित हुआ। राजा ने कहा "महाराज आप मुझे अलग से समय दीजिये, मुझे आप से कुछ बातें करनी हैं।" साधु ने कहा "अच्छा कल आ जाना, मैं तुम्हें अलग से समय दे दूंगा।" चोरों ने सोचा कि अब हमारा काम बन गया। अगले दिन राजा आया, उसने साधु से एकान्त में बातें कीं। नकली साधु के दो चेले पीछे छुपकर

उनकी बातें सुनने लगे। राजा ने कहा "महाराज मेरी एक इच्छा है उसे पूरी कर दें। मैंने यह विचार किया था कि आप जैसा कोई नौजवान साधु मिले तो मैं राजकुमारी की शादी उससे कर दूं। उसे राजपाट देकर मैं वन में तपस्या करने के लिए चला जाऊँ। आप मेरी यह प्रार्थना स्वीकार कर लीजिये।" साधु ने कहा "मुझे आपकी यह प्रार्थना स्वीकार नहीं है"। चोरों ने सोचा कि अभी यह नखरे कर रहा है बाद में मान जायेगा। राजा ने दूसरी बार फिर कहा मगर साधु ने इन्कार कर दिया। राजा ने फिर तीसरी बार कहा। इस बार साधु ने कहा कि मुझे नहीं करनी है, आप यहाँ से चले जायें। राजा चला गया। चोरों ने साधु से कहा "अरे मूर्ख ! तू ने क्या मूर्खता की !" साधु ने कहा "बेवकूफो जब मैं झूठा-मूठा साधु बना तब लोगों की इच्छाएं पूरी होने लगीं, जब सचमुच का साधु बन जाऊंगा तो क्या नहीं होगा"।

मैं आपको अपने अनुभव के आधार पर बता रहा हूँ। जब मैं जयपुर में रहता था वहाँ टूटा-फूटा गणेश जी का मन्दिर है। एक-दो आदमी मुश्किल से बुधवार को वहाँ जाते थे। धीरे-२ लोनों की आशाएँ पूरी होने लगीं। जब मैं १५ साल के बाद गया तो देखा कि हज़ारों आदमी वहाँ रहते हैं। बड़ी इच्छाएँ लोगों की पूरी होती हैं। मन्दिर का मालिक अब करोड़पति बन गया।

बचपन से मेरी यही इच्छा थी कि मालिक मुझे सच्चा और अच्छा बना दे। इस प्रार्थना के फलस्वरूप मैं महाराज जी के सम्पर्क में आया। आने से पहले भी मेरी गति जीवन्मुक्ति की थी। मैं कालिज के अन्दर ऐसे विचरता था, पढ़ाता था कि छात्र कहते थे कि कहीं शराब पीकर तो नहीं आते। मेरे ऊपर मालिक का नशा चढ़ा हुआ था। कभी

रजिस्टर ले गया; कभी नहीं ले गया लेकिन जब मैं छात्रों को पढ़ाता था तो उनको बहुत अच्छा लगता था। महाराज जी के सम्पर्क में आने से मेरे में एक विस्फोट हुआ, मैं बता नहीं सकता। यह महाराज जी की बड़ी कृपा थी। मैं आपको बता रहा था कि राधास्वामी को मैं अलग धर्म नहीं मानता। राधास्वामी एक अवस्था है, एक हालत है जिसमें पहुँचने के बाद आपको किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं रहती है।

'राधा' लोक है 'स्वामी' परलोक है। राधास्वामी में लोक और परलोक दोनों बन जाते हैं। इस युग में लोगों के पास इतना समय नहीं है कि वे हज़ारों साल तक समाधि लगायें। आजकल तो लोग सत्संग में भी आना नहीं चाहते। मैं देख रहा हूँ कि हज़ूराबाद के सत्संगियों में श्रद्धा और विश्वास दोनों हैं और मैं समझता हूँ कि हज़ूराबाद के सत्संगी निश्चित रूप से लोक और परलोक दोनों बना लेंगे।

अमेरिका के लोग बड़े भक्त हैं। वे जिज्ञासु हैं। मैं आपको एक मिसाल बताता हूँ। १९८४ में अमेरिका के प्रसिद्ध प्रोफेसर डा० रोडन हाइज़र भारत आये। वह भारत के विभिन्न धार्मिक स्थानों, संस्थाओं और मठों में गये लेकिन उनका कहीं मन नहीं लगा परन्तु जब वह होशियारपुर आये तो महाराज जी को देखते ही कहने लगे "बस, यही सच्चे और ऊँचे सन्त हैं। इनसे ऊँचा कोई नहीं है।" डा० रोडन हाइज़र ने मुझे बताया "महाराज जी की आँखों की चमक ने मुझे काबू में कर लिया।" इसी प्रकार अमेरिका में एक ग्लोरिया नाम की करोड़पति महिला है जिसने महाराज जी की किताब छापने के लिए बहुत पैसा दिया। ग्लोरिया ने योग साधन के लिए बहुत लोगों के साथ सम्पर्क किया लेकिन सब धोखेबाज़ निकले। वह बहुत दुःखी थी। वह कहती थी कि मैं किसी हिन्दुस्तानी साधु के सत्संग में

नहीं जाऊंगी लेकिन जब महाराज जी अमेरिका गये तो वह महाराज जी के दर्शनों को आई और उसकी इच्छा भारत में आने को हुई। ग्योरिया के साथ एक और महिला थी जिसका नाम सैली था। सैली के अन्दर बड़ी सिद्धियाँ थीं। उसका उन बड़े-२ डाक्टरों और सर्जनों से सम्पर्क है जो शरीर में नहीं हैं और सूक्ष्म शरीर में मनोमय कोश में रहते हैं। वह क्या करती थी? मान लो किसी के पेट में रसौली है तो वह उस मरीज़ को लिटा देती है और स्वयं ध्यान लगाती है। वहीं डाक्टर मरीज़ के सूक्ष्म शरीर में से रसौली निकाल देते हैं। सैली मरीज़ को २४ घण्टे आराम करने को कहती है। आप हैरान होंगे कि मरीज़ २४ घण्टे के आराम के बाद ठीक हो जाता है। ऐसी महिला महाराज जी के आगे नतमस्तक हुई।

महाराज जी को लोगों ने पहचाना नहीं कि ये मनुष्य के रूप में साक्षात् परमतत्त्व हैं। सत्पुरुष के सत्संग में आने से आपके सारे भ्रम दूर हो जाते हैं:—

आ गये सत्संग में और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही और गुरु के मत का हो गया॥

इस युग में इतना समय नहीं है कि अधिक समय तक ध्यान लगाया जाये इसलिए सभी लोग चाहते हैं कि हमें हर चीज़ सहज में और जल्दी मिल जाये। मुक्ति भी लोग तुरन्त ही चाहते हैं। इसीलिए मालिक ने सन्तों को भेजा कि वह जल्दी से जल्दी, सरल से सरल जीवन्मुक्ति का रास्ता बतायें:—

शठ सुधरहीं सतसंगति पाई,
पारस परसि कुधात सुहाई।

दुष्ट व्यक्ति भी सत्पुरुष के सम्पर्क में आने से सुधर जाते हैं। मैं समझता हूँ कि दुष्ट कोई होता ही नहीं है। यह

मैं अपने अनुभव के आधार पर बता रहा हूँ। मुझे तो कोई शठ मिला नहीं और मिला भी तो वह मेरा मित्र बन गया। एक बात मुझे बार-२ याद आ रही है। मैं पहली बार अमेरिका मैं पढ़ाने गया। मुझे वहाँ पर भारतीय दर्शन पढ़ाना था। मेरी कक्षा में पचास छात्र थे। जब मैंने पढ़ाना शुरू किया तो दो छात्रों ने मेरे से सवाल किये, मैंने जवाब दिया। वह सवाल पूछते मैं जवाब देता। एक हफ्ते तक ऐसा ही चलता रहा। जब एक हफ्ता गुज़र गया तो एक दिन उन्होंने बहुत ही सवाल किये। एक लड़की उठकर खड़ी हो गई, कहने लगी डा० शर्मा, यह लड़का हमारा समय नष्ट करता है, यह बुरा आदमी है बेकार मैं समय नष्ट करता है। आप हमें पढ़ाते जाइये।" मैंने हँस कर कहा "जौन तो बड़ा प्यारा लड़का है।" जैसे ही मैंने यह कहा वैसे ही वह लड़का उठकर खड़ा हो गया और कहने लगा "डा० शर्मा मैं आपकी सहनशीलता से तंग आ गया हूँ। मैंने सोचा था कि आपको क्रोध कराऊंगा मगर आप क्रोध करते ही नहीं हैं।" मैंने कहा "क्या मैं अपने बेटों से ही क्रोध करूँ, जो मेरे छात्र हैं ?"

अब मैं आपको उन दोनों लड़कों में से एक लड़के की, जिसका नाम पियर्स साल था, बात सुनाता हूँ। जुलाई के अन्त में एक दिन रात को उसने मुझे दस बजे टेलीफोन किया। मैंने पूछा "आप कौन बोल रहे हैं ?" कहने लगा "आपका शिष्य पियर्स साल बोल रहा हूँ।" मैंने कहा "क्या बात है ?" कहने लगा "मुझे आपसे एक बात की इजाज़त लेनी है। मेरी पत्नी ने आज ही एक बच्ची को जन्म दिया है। आपने हमें इतने प्रेम से पढ़ाया है कि ऐसा किसी ने नहीं पढ़ाया। मैं आपका कृतज्ञ रहना चाहता हूँ, आपको याद रखना चाहता हूँ। आप मुझे इस बात की इजाज़त दे

दें कि मैं अपनी बच्ची का नाम शर्मा रखूं।" उसने उस बच्ची का नाम बेबी शर्मा रखा। वह शर्मा बच्ची २६ जुलाई १९६३ को पैदा हुई। उसने हमारे साथ लगातार सम्पर्क रखा। जब वह बच्ची पाँच साल की थी तब मैं अमेरिका गया तो उस बच्ची के पिता ने मुझे बुलाया। मैं उसके घर ठहरा। वह बच्ची शर्मा बैठी-२ शरारतें कर रही थी। मैं उसके पास बैठा अख़बार पढ़ रहा था। उसकी मम्मी ने उसे बुलाया "ओ शरारती शर्मा, तू गन्दी शर्मा।" मैंने सोचा कि मुझे तो नहीं कह रही है! अब वह बच्ची २० वर्ष की हो गई है, मेरे दोनों लड़कों को सगा भाई मानती है। वह लड़की शाकाहारी है, समाधि लगाती है। मैंने तो किसी को बुरा पाया नहीं। जो बुरे भी थे वह भी सुधर गये। महाराज जी की कृपा से बड़े-२ कठोर लोग नमस्कार करते थे। कहने का मतलब यह है :—

शठ सुधरहिं सतसंगति पाई,
पारस परसि कुधात सुहाई।

लेकिन गुरु की संगत में लोग सुधरते ही नहीं हैं बल्कि उन्हें गुरु अपने से ऊंचा बना देता है क्योंकि वह चाहता है कि उसकी सच्चाई का मिशन चलता रहे। इसीलिए :—

आ गये सतसंग में और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही और गुरु के मत का हो गया॥

दुर्मति यही है कि हम दूसरों को अपने से अलग समझते हैं। गुरु के मत का अर्थ है कि परमात्मा परमतत्त्व एक है। जो एक करन वाली चीज़ है। वह है गुरु के मत की चीज़, दयाल की चीज़ है। जो अलग करने वाली चीज़ है वह काल की है। आपको कहा जाता है कि शिव संकल्प रखो। यह सही बात है कि आप गुरु का भजन करोगे और गुरु

दयाल है, तो आप भी दयालहो जाओगे। आप नाम का सुमिरन करो :—

नाम लेत भव सिन्धु सुखावें, ध्यान धरत कलिमल जावे।

गुरु से सम्बन्ध अवश्य रखो। गुरु को पिता मान लो, भाई मान लो, बेटा मान लो। कोई एक रिश्ता बना लो आप उसी से पार हो जाओगे। सूरदास ने कृष्ण को शिशु ही माना और बाललीलाओं का कितना सुन्दर वर्णन किया है! वह उसी से पहुँच गये। तुलसी दास ने भगवान् राम को अपना मालिक माना और स्वयं को दास मानते थे। मीरा ने भगवान् कृष्ण को आध्यात्मिक पति माना। गुरु से कोई भी रिश्ता मान लो। यदि कुछ नहीं मानो तो अपना दुश्मन ही मान लो, उसकी निन्दा करो। कबीर साहिब ने कहा है :—

कबीर निंदक ना मरे, जीवे आद जुगाद।
हम तो सतगुरु पाइया, निंदक के परसाद॥

निकट रहने वालों में निन्दा बहुत होती है इसलिए वह बेचारे खुद तो पहुँच नहीं सकते हैं मगर हमें उसका लाभ हो रहा है क्योंकि सत्संगियों की श्रद्धा बढ़ती चली जा रही है। आप सतगुरु से सवाल करो, वह जवाब देगा। यदि मेरे गुरु ने कृपा करके मुझे कोई चीज़ दे दी है तो मैं उसे बाँटूंगा चाहे किसी भी भाषा में बाँटूं। ऊँची भाषा में भी बोलूंगा और नीची भाषा में भी बोलूंगा। यदि मुझे खुद ही बात समझ में नहीं आयेगी तो मैं किसी भी भाषा में नहीं बोल सकता हूँ। मैं आपको बता रहा था कि आप दुश्मनी से भी तर जाओगे। बाली और रावण भी तर गये। जबकि बाली ने मालिक से दुश्मनी नहीं की लेकिन मालिक के भक्त से तो की थी। बाली ने अपने छोटे भाई सुग्रीव की पत्नी को घर में रख लिया था, भगवान् को

गुस्सा आ गया। इधर राम ने बाली को मुक्त करना था। भगवान् राम सामने से तो मार नहीं सकते थे क्योंकि बाली को वरदान दिया हुआ था कि जो कोई तेरे सामने आ जायेगा उसकी शक्ति तुझमें आ जायेगी इसलिए भगवान् राम ने बाली को पेड़ के पीछे से मारा। जब वह मरने लगा तो भगवान् राम उस के पास गये। उस न कहा "भगवान् ! साधु को बचाने के लिए आपने मुझे एक कसाई की तरह मारा ! बाली अन्दर से भक्त था :—

धर्म हेतु अवतरेउ गुसाईं, मारेउ मोहिं व्याध की नाईं।
मैं बैरी सुग्रीव पियारा, कारण कवन नाथ मोहिं मारा।

तब भगवान् ने दया करके कहा "तूने ग़लती की है" :—

अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुन शठ से कन्या सम चारी।

जो इनको कुदृष्टि देखता है वह बधके योग्य, दुराचारी है। तूने अपने छोटे भाई की बहू को रखकर समाज का विरोध किया है।" हालाँकि सन्तमत समाज से ऊँचा है लेकिन समाज की व्यवस्था बनान के लिए भावुकता का संरक्षण किया जाता है। राम ने कहा "बाली मैं तुझे ज़िन्दा किये देता हूँ।" बाली ने कहा "नहीं भगवान्, मैं ज़िन्दा रहकर क्या करूंगा। आपके हाथों मर कर मोक्ष को प्राप्त होऊंगा। यही बात रावण ने कही थी। रावण ने सीता को चुराकर भगवान् से दुश्मनी ली थी और अन्त में मोक्ष को प्राप्त हो गया। इसलिए आप सत्पुरुष से कोई सम्बन्ध अवश्य रखो, आप तर जाओगे। आज आपको इतना ही कहना चाहता हूँ।

सभी को राधास्वामी !

विशेष सूचना

परमदयाल जी महाराज के शताब्दी समारोह के सम्बन्ध में सभी सत्संगियों को दुबारा सूचित किया जाता है कि वे इस कार्य में पूरा-पूरा सहयोग दें। जैसे पहले बताया जा चुका है, १९८५-८६ में परमदयाल जी महाराज के जन्म के सौ वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में मानवता मन्दिर की तरफ से तीन प्रकार के कार्य किये जा रहे हैं :—

(१) परमसन्त परमदयाल पं० फकीर चन्द जी महाराज-स्मारक-ग्रन्थ का प्रकाशित करना।

(२) इस सम्बन्ध में भारत में और विदेशों में मानवता धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए सम्मेलन और सत्संग आयोजित करना।

(३) मानवता धर्म के देश-विदेश में नये केन्द्रों तथा शिक्षा-केन्द्रों के खोलने में सहायता देना और स्थानीय प्रबन्धकों का मार्ग-दर्शन करना।

उपर्युक्त तीन कार्यों में सभी सत्संगी सहयोग दे सकते हैं। स्मारक-ग्रन्थ में कोई भी व्यक्ति परमदयाल जी महाराज, दाता दयाल जी महाराज या मानव दयाल जी महाराज के सम्बन्ध में लेख, पत्र, चित्र (फोटो) आदि प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं। जिन सत्संगियों को परमदयाल जी के निकट रहने से अनुभव हुए हैं, वे अपने अनुभवों को लिखकर भेज सकते हैं। ऐसे लेख या सामग्री आदि को भेजते समय सत्संगियों को चाहिये कि प्रकाशन के खर्च में मदद देने के लिए यथाशक्ति आर्थिक मदद, सहयोग दें। यह लेख-सामग्री आदि नीचे दिये गये पते पर भेजे :—

आचार्य श्री शिव नन्दन भारद्वाज,
एम० ए०
मानवता मन्दिर, सूतैहरी रोड,
होशियारपुर (पंजाब) भारत।

धन-राशि का अनुदान नीचे दिये गये पते पर भेजना चाहिए :—

श्री नारायण दास डोगरा
जनरल सेक्रेटरी,
मानवता मन्दिर, सुतैहरी रोड,
होशियारपुर (पंजाब), भारत ।

नोट :—इन दो व्यक्तियों के अलावा अन्य किसी व्यक्ति के नाम से पत्र-व्यवहार किसी प्रकार का किसी हालत में न करे ।

निवेदक :
नारायण दास डोगरा
जनरल सेक्रेटरी ।

आवश्यक सूचना

परमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज के आदेशानुसार सभी सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि उनकी गैर-हाज़िरी में मानवता मन्दिर में साप्ताहिक सत्संग और मार्ग-दर्शन का कार्य आचार्य श्री शिव नन्दन भारद्वाज जी करेंगे । इनके अतिरिक्त आचार्य श्री शब्दानन्द जी दैनिक सत्संग करायेंगे और सत्संगियों का मार्ग-दर्शन करेंगे ।

पिछली बैसाखी पर हजूर मानव दयाल जी महाराज ने निम्नलिखित चार व्यक्तियों को आचार्य पदवी दी थी :—

(१) श्री विजय नरेश जी नेगी
(२) श्री केशव प्रसाद जी वर्मा
(३) श्री सूर्य नारायण जी भट्ट ।
(४) श्री शब्दानन्द जी ।

हजूर मानव दयाल जी की अनुपस्थिति में ये चारों आचार्य तथा आचार्य श्री भरद्वाज जी ही सत्संग देने के अधिकारी हैं । इनके अलावा अन्य किसी भी व्यक्ति को

सत्संग कराने का अधिकार हजूर मानव दयाल जी ने नहीं दिया है।

इसलिये सब सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि मानवता मन्दिर के नाम पर किसी भी दूसरे व्यक्ति से जो लोग सत्संग कराने या धनराशि भेट देने का कार्य कर रहे हैं वह बिलकुल अनधिकृत हैं और इसकी ज़िम्मेदारी मानवता मन्दिर पर नहीं होगी।

नारायण दास डोगरा
जनरल सेक्रेटरी
मानवता मन्दिर, होशियारपुर (पंजाब)।

विशेष सूचना

सितम्बर मास का मासिक सत्संग रविवार २२-९-८५ (सितम्बर) के दिन मानवता मन्दिर में विशेष रूप से आयोजित होगा। क्योंकि यह सत्संग परमसन्त परमदयाल पण्डित फ़कीर चन्द जी महाराज के आज से चार वर्ष पहिले निर्वाण उत्सव से सम्बन्धित होगा। सभी सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि इस विशेष अवसर पर सत्संग में सम्मिलित होकर लाभ उठायें।

आवश्यक सूचना

बटाला और आसपास के रहने वाले सत्संगियों को यह शुभ सूचना दी जा रही है कि परमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज शनिवार १२ अक्टूबर और रविवार १३ अक्तूबर १९८५ को बटाला में सत्संग देंगे। सत्संग के स्थान और समय की विशेष सूचना डा० चन्द्र नरेश नेगी, ओहरी चौक बटाला या मास्टर कुलदीप शर्मा, बटाला से प्राप्त करे। २९ सितम्बर के मानवता मन्दिर में साप्ताहिक सत्संग में स्थान और समय की सूचना भी दे दी जायेगी।

नारायण दास डोगरा
जनरल सेक्रेटरी

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो,

राधास्वामी, परमदयाल जी सहाई !

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको विदेशी दौरे का हाल बताया था। २१ जून प्रातः १-३० बजे देहली पहुँचकर हम एक दिन आचार्य के० पी० वर्मा के घर रहे। हवाई अड्डे पर भी बहुत सत्संगी आ चुके थे। २१ जून को भी श्री वर्मा के घर पर सत्संगियों का तांता बंधा रहा। मुझे श्री वर्मा ने बताया कि सलवान पब्लिक स्कूल के सर्वेसर्वा श्री (S. D. Sharma) सलवान साहिब ने सलवान पब्लिक स्कूल में मेरे २२ और २३ जून के सत्संग के लिए हर प्रकार से सहायता दी। दूसरे दिन मैंने स्वयं अनुभव किया कि श्री सलवान साहिब को परमदयाल जी के सत्संगों की भान्ति मेरे सत्संग भी इसीलिए प्रिय हैं कि मैंने उनके कहने के अनुसार वर्ष में कम से कम चार सत्सग देहली में देने का वचन दिया था। मुझे यह बात लिखते हुए प्रसन्नता है कि श्री सलवान ने स्वयं कमरों में पुताई कराई, सजावट कराई और कमरों में तथा हाल में कूलर लगवाये ताकि सत्संगियों को गर्मियों में आराम रहे। मैं उनके सेवाभाव की सराहना करता हूँ।

मैंने अपनी आँखों से देखा कि उन्होंने खुद गलीचे बिछवाने में मदद की। गर्ज कि सत्संगियों के ठहरने का प्रबन्ध दशहरे के सम्मेलन के प्रबन्ध की अपेक्षा बहुत अच्छा था। देहली और देहली से बाहिर से आने वाले सत्संगियों की संख्या बहुत अधिक थी। मैं देहली वालों को दिल से सद्भावना देता हूँ और आशा करता हूँ कि वह मुझे परमदयाल जी की आज्ञा-पालन करने में और उनके अमर सन्देश को सब सत्संगियों तक पहुँचाने और समझाने में सहयोग देते रहेंगे। मैं तो केवल इतना ही कहूँगा कि मैं किसी पर ऐहसान नहीं कर रहा, अपने गुरु की आज्ञा का अक्षरशः पालन कर रहा हूँ। इसी कारण परमदयाल जी के परम प्रिय ऐसे-२ ऊँचे चरित्र वाले और सच्चे सेवाभाव वाले सत्संगी मेरे इस उद्देश्य को पूरा करने में अपने आप मेरे निकट आ रहे हैं। इन सब घटनाओं से मुझे परमदयाल जी महाराज के हुए वाक्य का ध्यान आ जाता है जो उन्होंने मुझे सन् १९८१ में लिखा था। "मुझे पूरा यक़ीन है कि तेरी ज़ाते पाक़ के ज़रिया यह मानवता धर्म विश्व में फैलेगा, फैलेगा, फैलेगा।"

"ज़ाते पाक़" तो मालिक की ही है किन्तु उसका अंश हर एक व्यक्ति में मौजूद है। यही कारण है कि सन्तमत एवं मानवता धर्म की परम्परा में एक जीवित गुरु दूसरे जीवित अधिकारी को ही अपने संस्कार देकर और अपने जैसा बनाकर सच्चे अनुभव को सत्संगियों में बाँटने का आदेश देता है। सुरत-शब्द योग की विधि, जीवित विधि है। वह एक जीवित व्यक्ति से ही दूसरे जीवित व्यक्ति को प्राप्त होती है। सत्य तो यह है कि गुरु तो एक ही है और वह परमतत्त्व है, चाहे वह किसी भी चोले में क्यों न हो। वह उसी सच्चाई को और ज्ञान को बाँटता है जिसका

उसने खुद अनुभव किया है। उसका यह अनुभव उसके अपने सतगुरु की कृपा से और उनके द्वारा दिये गये संस्कारों से तभी हासिल हुआ, जब उसने अपने गुरु की आज्ञा का पालन किया। गुरु की आज्ञा क्या होती है? गुरु की आज्ञा यही है कि अपने अन्दर वाले गुरु को जानो, पहचानो और उसको सभी में मौजूद महसूस करो। ऐसे अनुभव को चश्मे-वाहदत या ब्रह्मदृष्टि या समदृष्टि कहा जाता है। एक बार फिर मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह समदृष्टि तभी मिलती है जब गुरु के द्वारा दिये गये नाम को पूरी तरह से साधा जाये। यदि गुरु ने मन्त्र दिया है तो उस मन्त्र का सुमिरन करे लेकिन यह मन्त्र या नाम उसे तभी मिलेगा जब उसने सच्चे दिल से, तन, मन, धन से गुरु की सेवा की होगी। यह चश्मेवहदत गुरु-प्रसाद हो जाता है लेकिन मंज़िल इससे आगे है। इस हालत को पाने के बाद परिवर्तनशील जगत् में रहते हुए भी साधक परिवर्तनों, दुःखों-सुखों में घबराता नहीं।

वह जीवन का सफ़र तो करता है लेकिन अपने निज-रूप को पहचानने के कारण वह जगत् का तमाशा देखते हुए एक दर्शक की तरह जगत् के आडम्बरों में फँसता नहीं है, उसे धन का लोभ नहीं होता है, काम और क्रोध का वेग नहीं सताता। परमदयाल जी महाराज जब इस अवस्था पर पहुंचे तो दाता दयाल जी महाराज ने उनके बारे में लिखा :—

"चश्मे वहदत भी मिला,
वहदत का मंजर देखकर।
कर रहा है रात दिन,
दुनिया की मंज़िल का सफ़र॥"

लेकिन इस सफ़र से गुज़रते हुए मन के स्वरूप को

पहचानते हुए वह अपने आपे को मन के उतार-चढ़ाव में फँसाता नहीं है। वह साक्षी हो जाने के कारण दुनिया के स्वप्न को देखता हुआ भी हमेशा अपनी दृष्टि अपने उस परमतत्त्वरूपी आपे पर रखता है जो हमेशा द्रष्टा, कर्त्ता और भोक्ता होते हुए भी संसार के द्वन्द्व से अछूता रहता है। परमदयाल जी महाराज की इसी हालत को बयान करते हुए दाता दयाल जी ने लिखा :—

"क्या है दुनिया ख़्वाब है,
और ख़्वाब बीं ज़ाते फ़कीर।
दामो हिरसो मालोज़र में,
वह नहीं हरगिज़ असीर।"

इन पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि गुरु कृपा से साधक अपने निजरूप में ठहर जाता है। निजरूप में ठहरना सभी भेदभावों का समाप्त हो जाना है। तब शिष्य, शिष्य नहीं रहता। गुरु, गुरु नहीं रहता। गुरु का गुरुपना शिष्य के शिष्यपने में विलीन हो जाता है। गुरु के चोला छोड़ देने पर भी गुरु अपने शिष्य के चोले में जीवित रहता है और उसी गुरु के अनुभव को नये चोले के ज़रिया बाँटा जाता है। इसीलिए कहा जाता है कि गुरु न जन्मता है, न मरता है।

सन्तमत, राधास्वामी मत यानि कि मानवता धर्म में जीवित गुरु की प्रथा सब से ज़्यादा महत्त्व रखती है। एक तो गुरु ने जब अपने संस्कार देकर के अपने शिष्य को काम सौंप दिया तो अन्य सत्संगियों के लिए कोई परिवर्तन नहीं हुआ। दूसरा कारण यह है कि परमतत्त्व मनुष्य के चोले में आकर गुरुपने का खेल खेलते हुए अपने जीवन को दूसरों के लिए दृष्टान्त के रूप में प्रस्तुत करते हुए शरीर को निश्चित रूप से इसलिए त्याग देता है कि उसका उद्देश्य

समाप्त हो जाने पर उसे काल के नियमों के मुताबिक वैसे ही शरीर को त्याग देना पड़ता है जैसे कबीर साहिब ने किया और कहा :—

"यह चादर सुर, नर, मुनि ओढ़ी,
ओढ़ के मैली कीन्ही चदरिया ।
दास कबीर जतन से ओढ़ी,
ज्यों की त्यों धर दीन्ही चदरिया ।"

इस प्रकार काल के नियमों के मुताबिक शरीर को त्याग देना भी एक ऐसी मिसाल है जो आम लोगों के लिए चेतावनी का काम करती है । जब सभी अवतार, सन्त और परमसन्त अन्त में निर्भय होकर शरीर को त्यागते हैं तो हर एक व्यक्ति को यह स्मरण रखना चाहिए कि वह अपने समय को नष्ट न करे और जल्दी ही अपने जीवन को बदल डाले । इसी विचार को प्रस्तुत करते हुए दाता दयाल जी ने लिखा है :—

"दरपेश सबके वास्ते मन्ज़िल अजीब है ।
गाफ़िल बाहोश वाश अजल अनक़रीब है ।"

दूसरे शब्दों में हर एक व्यक्ति इस जगत् में ख़ास मक़सद को लेकर आता है । जब उसका मक़सद पूरा हो जाता है तो उसे शरीर त्यागना पड़ता है । साधारण व्यक्ति इस राज़ को नहीं समझता इसलिए उसे किसी सत्पुरुष या सतगुरु की संगत करनी पड़ती है । सतगुरु की संगत और उसके सत्संग से ही उसको अपने जीवन के लक्ष्य की स्मृति आ जाती है । सतगुरु उसको उस लक्ष्य पर पहुँचने के लिए ही नामदान देता है जैसे कि पहले मैंने नामदान के सिलसिले में बताया है । हरएक सत्संगी को एक ही नाम यानि कि उस लक्ष्य पर पहुँचने का एक ही ढंग नहीं बताया जाता । अन्दर का नाम देने से पहले सत्संगी के पिछले कर्मों

के बोझ को उतारने के लिए सतगुरु सहज में ही उसके स्वभाव के अनुसार रहने की विधि बताता है। उसके बाद उसे सुमिरन, ध्यान, भजन का रास्ता भी बताता है। यह सतगुरु महरमेराज़, यानि कि परमतत्त्व के भेद को जानने वाला और कर्मों का सहज में निपटारा कराने वाला, होना चाहिए। कई बार सतगुरु, सुमिरन, ध्यान, भजन की आज्ञा देने से पहले विचित्र हिदायतें करता है। परमदयाल जी के भाई सुरेन्द्र नाथ जी ने छोटी उम्र में दाता दयाल जी से नामदान देने की प्रार्थना की। दाता दयाल जी महाराज ने उन्हें सुमिरन के लिए नाम तो दिया लेकिन साथ यह हिदायत कर दी "तुम्हें अभ्यास करने की कोई ज़रूरत नहीं न ही इस नाम के सुमिरन करने की आवश्यकता है। तुम काम करो; तुम्हारे लिए जीवन काम है और काम जीवन है। पिछली उम्र में अभ्यास करना, अन्त में मेरी गोद में आ जाओगे।" वास्तव में ऐसा ही हुआ।

मैंने पिछले मासिक सन्देश में नामदान के सम्बन्ध में यह बताने का वचन दिया था कि सुरत-शब्द योग में किस प्रकार मनुष्य के पिण्ड में नीचे के केन्द्रों को छोड़कर तीसरे नेत्र से चलकर ऊपर के केन्द्रों पर पहुँचने की विधि बताई जाती है। इसी सिलसिले को जारी रखते हुए अगले मासिक सन्देश में सुरत-शब्द योग की व्याख्या की जायेगी और यह बताया जायेगा कि किस प्रकार हमारे पिण्डी क्षत्र में सभी दवी-देवता मौजूद रहते हैं। तीसरे नेत्र से, यानि कि आज्ञा चक्र से सुमिरन, ध्यान को शुरू करने से नीचे के दर्ज़े सहज में ही पार हो जाते हैं। पुरुष या सतगुरु सत्संगी को आज्ञा चक्र से साधन आरम्भ कराने से पहले उसके पिछले कर्मों को निपटाने के लिए ख़ास आज्ञा इसलिए देता है क्योंकि उन कर्मों के भोगने के बाद शिष्य का मन पवित्र हो जाता

है। उसके अचेतन मन में जो उसके पिछले जन्मों के संस्कार और इस जन्म की दबी हुई इच्छाएँ बिना पिछले कर्मों के भोग उत्पात कर सकती हैं। आज्ञा चक्र पर ध्यान लगाने से मनुष्य की संकल्प शक्ति हज़ारों गुणा बढ़ जाती है। इसलिए अगर कर्मों का बोझ अभी तक मन पर है तो, बिना गुरु के मार्गदर्शन के, ध्यान लगाने वाला व्यक्ति ऊपर चढ़ने के बजाय नीचे गिर सकता है। इसीलिए मैंने सुरत-शब्द योग की विधि की विशेषता बताने से पहले इस मासिक सन्देश में यह व्याख्या की है कि सत्पुरुष हर एक शिष्य को विशेष पृष्ठभूमि के मुताबिक उसे खास किस्म का व्यवहार बतलाता है। अगले मासिक सन्देश में नाम के सम्बन्ध में व्याख्या की जायेगी।

हाँ तो मैं आपको यह बता रहा था कि २२ और २३ जून के सलवान पब्लिक स्कूल में दिये गए सत्संगों में श्रद्धायुक्त सत्संगियों की काफ़ी भीड़ थी। २३ जून के सत्संग के प्रोग्राम में श्री विजय नरेश नेगी को मानवता धर्म के आचार्य पद की दीक्षा दी गई। श्री विजय नरेश नेगी बटाला के उन डाक्टर A. C. Negi के सुपुत्र हैं जो परमदयाल जी के सत्संगों के दौरान में एक कविताबद्ध आरती बहुत प्रेम से और लगन से गाया करते थे। इस कविता की भाषा और उसके साथ-२ हृदय से निकली हुई प्रार्थना की अभिव्यक्ति सुनते ही बनती थी। इस विनय में डा० नेगी जो कि एक सच्चे साधक थे, परमतत्त्व स्वरूप परमदयाल जी महाराज से यही निवेदन करते थे कि उनकी आध्यात्मिक भूख को तृप्ति हो जाये और उन्हें सांसारिक बन्धनों से मुक्ति मिले। कहा जाता है कि जब डा० ए० सी० नेगी की लगन और भक्ति के साथ उर्दू की सलीस (सरल) भाषा में और सुन्दर शैली में परमदयाल जी के सत्संगों में यह

आरती गाते थे तो लोगों की आँखों से अश्रुधारा बह उठती थी। उसी २३ जून के सत्संग में जब भाग्य माता जी वे डा० ए०सी० नेगी के सबसे छोटे पुत्र और विजय नरेश नेगी के सबसे छोटे भाई चन्द्र नरेश नेगी को वही आरती गाने का आग्रह किया और उसने गाया तो सलवान पब्लिक स्कूल के सत्संग में बैठे हुए श्रोताओं की आँखों से आँसू बह निकले। चन्द्र नरेश नेगो ने उसी लहजे में और उसी तर्ज में यह आरती गाई जिसमें उनके पिता गाते थे। वास्तव में यह एक बहुत ही खास मौक़ा था जिसमें चन्द्र नरेश के भाव उमड़ पड़े क्योंकि उन्होंने अपने बड़े भाई के आचार्य पद की दीक्षा के भाषण के तुरन्त बाद ही कविता पाठ किया। श्री विजय नरेश नेगी ने आचार्य पद का उत्तरदायित्व स्वीकार करते हुए बहुत ही भाव पूर्ण और उत्कृष्ट सत्संग दिया। याद रहे कि श्री विजय नरेश को मानवता मन्दिर में बैसाखी के अवसर पर ही श्री के० पी० वर्मा, श्री शब्दानन्द और श्री एस० एन० भट्ट के आचार्य की दीक्षा के समय ही आचार्य घोषित कर दिया गया था। किन्तु वह विशेष परिस्थितियों के कारण उस अवसर पर उपस्थित नहीं हो सके। मुझे पूरी आशा है कि विजय नरेश नेगो अपने आचार्य पद के कर्त्तव्य को बहुत सुचारु रूप से निभायेंगे और बहुत कुशलता से मानवता धर्म की सेवा करते हुए आध्यात्मिकता में प्रगति करेंगे और यह प्रगति उन्हें इसी जीवन में ईश्वरानुभूति के लक्ष्य तक पहुँचा देगी। उन्होंने उस अवसर पर जो सत्संग दिया उससे प्रमाणित होता है कि विजय मेरी आशाओं के अनुकूल सफलता प्राप्त करेंगे।

हम २९ जून सांयकाल मानवता मन्दिर से करीब दो महीने दस दिन की अनुपस्थिति के बाद होशियारपुर पहुंचे। ३० जून को रविवार का सत्संग आयोजित था उसमें

भी काफी संख्या में सत्संगियों ने भाग लिया और ऐसा लगा कि यह सत्संग २ जुलाई १९८५ को होने वाले गुरु पूर्णिमा के उत्सव की भूमिका थी।

जून महीने तक की घटनाओं की सूचना यहाँ समाप्त होती है। जुलाई और अगस्त की गतिविधि आपको 'मानव मन्दिर' की अगली प्रतियों में दी जायेगी। इन शब्दों के साथ मैं सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आप इस महीने प्रसन्नता, पवित्रता और जीवन में समता का अनुभव करें। मैं आपको हृदय से प्रेम आशीर्वाद और राधास्वामी प्रेषित करता हूँ।

आपका फ़कीरमय,
मानव

नोट :—(१) न कोई किसी का दोस्त है न कोई किसी का दुश्मन है। इन्सान अपना दोस्त और अपना दुश्मन आप ही है।

(२) पापी ईश्वर को सज़ा देने वाला और काल समझकर उसकी पूजा करते हैं। यह नादान सख़्त ग़लती पर हैं। इनका यह भाव न ईश्वर को इनका प्यारा बनायेगा। न यह ईश्वर के प्यारे बन सकेंगे। जहाँ ख़ौफ है वहाँ प्रेम और मुहब्बत कहाँ।

— दाता दयाल

हमारी बात गुरू की दात

संग्रह कर्त्ता :
डा: परस राम अग्रवाल
आदमपुर।

खुशी आई, खुशी आई, खुशी आई, खुशी आई।
खुशी का है मुझे सौदा, खुशी का मैं हूँ शैदाई॥
खुशी दौड़ी चली आती है, जब मैं याद करता हूँ।
उसी का नाम ले ले कर, दिल अपना शाद करता हूँ।
खुशी की ज़िन्दगानी है, खुशी का हैं सफर अपना।
यही हिस्से में आई है, दिखाती है असर अपना॥
इसी के वास्ते दुनिया में, जिनको देखो फिरते हैं।
नहीं जो राज़ से वाकिफ, वही बेचारे गिरते हैं॥
हुआ जब करम मुर्शिद का, हमें यह बात समझाई।
खुशी है बन्दगी उनकी, इसी से मेरी बन आई॥
खुश रहो और हो खुशी की ज़िन्दगी।
खुशी-दिली ही है खुदा की बन्दगी॥
जो हम को काम बख़्शा है, खुशी से उसको करते हैं।
हमारा इस में क्या है, हम दम उनका ही भरते है॥
इक नज़र मुझ को दिखाई, मैं हुआ साहब नज़र।
तेरी ही तासीर से, आया है यह मुझ में असर॥

—0—

Regd. No. 26265/74 SEPTEMBER 10th 1985

MANAV MANDIR NWHSP—7

5 भारत INDIA

ADDRESS

To

938.Sh.Shinda Vithal
C/o Arju Rao Goult
Gudda Banswada Posta
N.Banswada Distt:
Nizamabad.A.P.

Phone ...2

From : MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001

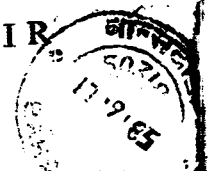

Shiv Dev Rao Press Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)